खंड 3
मैक्स वेबर की कृतियों के दार्शनिक आधार

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

इकाई 7 मैक्स वेबर की कृतियों के दार्शनिक आधार*

इकाई की रूपरेखा

7.0 उद्देश्य

7.1 प्रस्तावना

7.2 मैक्स वेबर का जीवन–परिचय

7.3 सामाजिक–ऐतिहासिक पष्श्ठभूमि

7.4 अन्य विचारकों के प्रभाव

7.4.1 प्राकृतिक एवं सामाजिक विज्ञान–शास्त्रों के बीच वाद–विवाद

7.4.2 कारणता और संभाव्यता

7.4.3 सामाजिक विज्ञान में वस्तुपरकता एवं मूल्य

7.5 मुख्य विचार

7.5.1 आदर्श प्ररूप

7.5.2 सामाजिक क्रिया

7.5.3 तर्कसंगतता

7.5.4 धर्म और अर्थषास्त्र

7.6 सारांश

7.7 संदर्भ

7.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

7.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप

- मैक्स वेबर के जीवनचरित्र संबंधी जानकारी का वर्णन करने के योग्य बन सकेंगे;
- मैक्स वेबर के लेखन को प्रभावित करने वाले मुख्य विचारों एवं परिप्रेक्ष्यों की रूपरेखा प्रस्तुत करने के योग्य बन सकेंगे; और
- मैक्स वेबर के लेखों, पुस्तकों आदि में निहित मुख्य विचारों का वर्णन करने के योग्य बन सकेंगे।

7.1 प्रस्तावना

इस इकाई को हम वेबर के जीवन एवं काल संबंधी एक संक्षिप्त जीवन–चरित विवरण से आरंभ करेंगे। इससे हमें उन बौद्धिक विचारों एवं परिप्रेक्ष्यों को पहचानने में मदद मिलेगी जिन्होंने उनकी सोच को प्रभावित किया। यहाँ हम इस बात पर चर्चा करेंगे कि वेबर ने कैसे समाजशास्त्र को प्राकृतिक विज्ञान से अलग माना, जहाँ वे किसी खास विषयवस्तु के तहत सामाजिक नायकों द्वारा किसी खास ऐतिहासिक संदर्भ में समाजशास्त्र को जो अर्थ दिया गया है, उससे अलग वेबर समाजशास्त्र को किस रूप से संकल्पनाबद्ध करते हैं।

*शुभांगी वैद्य, अंतर्विद्याश्रयी और बहु–विद्याश्रयी अध्ययन विद्यापीठ, इग्नू, नई दिल्ली द्वारा रचित

7.2 मैक्स वेबर का जीवन–परिचय

मैक्स वेबर का जन्म 21 अप्रैल, 1864 को भुरिंगा, जर्मनी के अर्फर्ट नामक कस्बे में एक धनी प्रोटेस्टेंट परिवार में हुआ। मैक्स के पिता एक राजनीतिज्ञ थे, और तत्कालीन राजनीतिक व्यवस्था का एक अहम हिस्सा थे, जिस कारण उनकी जीवन–शैली विलासितापूर्ण थी। दूसरी और इनकी माता हलीन बेहद धार्मिक प्रवृत्ति की थीं, जिनके मूल्य–मान्यताएँ अपने पति से नितांत भिन्न थीं। अतः मैक्स के माता–पिता का वैवाहिक जीवन तनावमय रहा। वैवाहिक संबंध की यह कड़वाहट वर्ष–दर–वर्ष बढ़ती ही गई और इसका असर उनके बच्चों पर दिखाई दिया। मैक्स पर यह असर अपने माता–पिता के प्रति भंग निष्ठा में प्रकट हुआ जिसने उन्हें मनोवैज्ञानिक पीड़ा की ओर धकेल दिया। आइए, वेबर के शुरुआती समाजीकरण एवं स्कूल–शिक्षा के विषय में जानने के लिए बॉक्स 7.1 पर नज़र डालें।

बॉक्स 7.1 वेबर का प्रारंभिक सामाजीकरण एवं स्कूली–शिक्षा

''वेबर बचपन में बहुत कमजोर थे। उन्हें चार वर्ष की आयु में मेनिनजाइटिस नामक बीमारी हो गई थी। उन्हें पुस्तकें खेल से अधिक प्रिय थीं। प्रारंभिक किशोरावस्था में उन्होंने व्यापक अध्ययन कर अपनी बौद्धिक रुचियाँ विकसित कर लीं। उनका पालन–पोषण बौद्धिक रूप से प्रेरक वातावरण में हुआ। छोटी अवस्था में ही वे त्रिश्के, साइबल, डिल्थी व अन्य कई प्रसिद्ध इतिहासवेत्ताओं से मिल चुके थे। उन्होंने गोते, स्पिनोजा तथा कांत आदि के विचारों को भी पढ़ा। भाषा, इतिहास तथा साहित्य में उन्हें श्रेष्ठ माध्यमिक शिक्षा मिली थी। फिर भी, अपने स्कूली शिक्षा काल में वेबर संकोची तथा अंतर्मुखी प्रकृति के रहे। स्कूल के अध्यापक वेबर की अनुशासनहीनता तथा सत्ता के प्रति अनादर की भावना की अकसर शिकायत करते थे।

वर्ष 1882, में 18 वर्ष की आयु में वेबर ने हाइडलबर्ग विश्वविद्यालय में प्रवेश लिया। यहाँ आकर संकोची तथा अलग–थलग रहने वाले वेबर अचानक सक्रिय हो गये तथा समाज में लोगों से मिलने–जुलने लगे। विश्वविद्यालय में वे छात्रों के बीच लोकप्रिय हो गये। बहरहाल, उन्होंने तीन सत्रों के बाद अपनी शिक्षा पूरी किए बगैर ही स्ट्रासबर्ग में सेना की नौकरी शुरू कर दी।

दो वर्ष की सेना की नौकरी के पश्चात्, वर्ष 1884 में वेबर अपने माता–पिता के पास वापस लौट गया। अपनी शिक्षा पूरी करने के लिए उन्होंने बर्लिन विश्वविद्यालय में प्रवेश लिया। उन्होंने गॉटिंगन विश्वविद्यालय में भी शिक्षा प्राप्त की।'' (ईएसओ 13, खंड 4:4 से अनुकूलित) [जीवन परिचय : मैक्स वेबर (1864–1920)]

जीवन परिचय : मैक्स वेबर (1864–1920)

एक प्रतिभाशाली छात्र, वेबर ने हाइडलवर्ग विश्वविद्यालय में षिक्षा प्राप्त की और फिर, बर्लिन विश्वविद्यालय में आर्थिक एवं विधिक इतिहास का अध्ययन किया। जहाँ फिर उन्होंने न्यायशास्त्र पढ़ाया। उसके पी.एच. डी. का शोध–विषय रहा–'मध्यकाल में वाणिज्यिक समाजों का इतिहास', और डॉक्टरेट की उपाधि पश्चात् उनके उत्तर डॉक्टरीय अध्ययन का विषय रहा– रोमन कृषिक इतिहास। उन्होंने मैरिएन श्नीत्गर से विवाह किया, जो उनके दूर के रिश्ते की बहन थी। अपने चौथे दशक के आरंभ में ही

उन्होंने जर्मन विश्वविद्यालय व्यवस्था में एक प्रोफेसर का पद भी हासिल कर लिया। उन्होंने अपने अनेक भाषणों एवं व्याख्यानों में अपनी शैक्षिक प्रतिभा एवं विद्वता का लोहा मनवाया, जिनमें सर्वाधिक प्रसिद्ध रहा वर्ष 1895 में दिया गया उनका सार्वजनिक भाषण, जिसका विषय था– राष्ट्रीय सरकार और आर्थिक नीति, और जो 'फ्राइबर्ग एड्रेस' के नाम से प्रचलित है।

मैक्स की शैक्षिक उपलब्धियाँ उसे बेशक ऊँचाइयों तक ले गईं, उनका व्यक्तिगत जीवन अपने पिता के साथ विवाद के कारण गहरे संकट से ही गुजरा। कारण, अपने बेटे से कहा–सुनी हो जाने के तत्काल बाद उनकी आकस्मिक मृत्यु ने मैक्स को अंदर तक झिंझोड़ कर रख दिया था। दरअसल, अपने पिता की मृत्यु के लिए मैक्स ने स्वयं के उत्तरदायी माना, जिसके परिणामस्वरूप वे गहन अपराध–बोध से ग्रस्त रहे। अनेक वर्षों तक वेबर मनोरोग से पीड़ित रहे, जिससे उसे अंततोगत्वा हाइडलबर्ग विश्वविद्यालय में अपनी प्रोफेसरशिप से इस्तीफ़ा ही देना पड़ा। वर्ष 1903 में ही वे अपना विद्याध्ययन से संबंधित कार्य पुनः प्रारंभ कर सके। परंतु वे बौद्धिक कार्य हेतु अब भी नहीं लौट पाये थे। उनके भयावह व्यक्तिगत कटु अनुभव, बहरहाल, उन्हें कुछ ऐसी विधाध्ययन से जुड़ी कृतियाँ प्रस्तुत करने से नहीं रोक पाया जो कि आज भी स्मरणीय एवं प्रशंसा की पात्र हैं। उनके विषयों में शामिल रहे– धार्मिक अवधारणाओं तथा आर्थिक एवं सामाजिक परिवर्तन के बीच अंतर्संबंध; आधुनिकता के पारिभाषिक अभिलक्षण स्वरूप 'बुद्धिसम्पन्नता' की वृद्धि; अधिकार एवं प्राधिकार; तथा व्यक्ति–विशेष पर आधुनिक राज्य का नियंत्रण।

वर्ष 1904 में, वेबर ने अपने महत्वपूर्ण निबंध प्रकाशित करवाए जो कि सामाजिक एवं आर्थिक मुद्दों, समाज विज्ञान–शास्त्रों में वस्तुपरकता के प्रश्न तथा वर्ष 1905 में प्रकाशित उनकी प्रसिद्ध पुस्तक 'द प्रोटेस्टेंट एथिक एंड द स्प्रिंट ऑफ कैपिटलिज़्म' के प्रथम भाग से संबंधित थे। उन्होंने उसी वर्ष अमेरिका की यात्रा भी की। इस यात्रा ने किसी पूँजीवादी अर्थव्यवस्था और राजनीतिक संगठन के विभिन्न मुद्दों में उसकी रुचि पर गहरा प्रभाव डाला। इन मुद्दों पर उनके अनेक महत्वपूर्ण सैद्धांतिक सूत्र–संयोजन उसकी अमेरिका यात्रा में ही निहित हैं। बाद के वर्षों में वेबर की शैक्षिक प्रस्तुतियों में भारी वृद्धि देखी गई। उनके कुछ उल्लेखनीय योगदानों में शामिल रहे– चीन के धर्मों, कन्फ्यूशियस वाद एवं ताओवाद (वर्ष 1915 में प्रकाशित); तथा भारत के धर्मों, हिन्दू धर्म व बौद्धधर्म एवं प्राचीन यहूदी धर्म (वर्ष 1916–17 में प्रकाशित) विषयक उनके अध्ययन–विषय। वर्ष 1919 में, वेबर ने बर्लिन विश्वविद्यालय में 'विज्ञान–एक व्यवसाय' तथा 'राजनीति– एक व्यवसाय' पर एक महत्वपूर्ण भाषण दिया, जिसमें जर्मनी में राजनीतिक महापरिवर्तन के दौर में उनके राजनीतिक एवं बौद्धिक विचार सुस्पष्ट हुए। उन्होंने अपनी पुस्तक 'इकॉनमी एंड सोसाइटी' पर भी व्यापक काम किया, परंतु वे उसे पूरा करने में विफल रहे और वे उनकी मृत्यु के बाद ही प्रकाशित हो सकी। पॉजी (2006:16) के अनुसार, उनके प्रमुख योगदान निम्नलिखित श्रेणियों में बाँटे जा सकते हैं–

– आर्थिक इतिहास विषयक लेख;

– ग्रामीण श्रमिकों, औद्योगिक कार्य–दशाओं एवं जर्मन शेयर बाजार के विषय में अपने आनुभाविक अध्ययन–कार्यों के आधार पर लेख;

– सांस्कृतिक 'विज्ञान–शास्त्रों' व उनकी कार्यविधि विषयक लेख;

– काल्विनवाद (जॉन काल्विन के उपदेशों पर आधारित एक प्रोटेस्टेंट ईसाई पंथ),

कन्फ्यूशियसवाद एवं ताओवाद (प्राचीन चीनी धर्म), हिंदू धर्म व बौद्ध धर्म एवं यहूदीवाद के समाजशास्त्र विषयक लेख; तथा

– सामान्य समाजशास्त्र, विशेषकर आर्थिक, धार्मिक, विधिक एवं राजनीतिक व्यवस्थाओं के बीच संबंध विषयक लेख।

वर्ष 1920 में, 56 वर्ष की अपेक्षाकृत अल्प आयु में ही कुछ समय ज्वरग्रस्त रहने के बाद मैक्स वेबर की मृत्यु हो गई। बाद में पता चला कि उन्हें न्यूमोनिया हो गया था।

7.3 सामाजिक–ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

वेबर एक लोक बुद्धिजीवी भी थे, जो राजनीति के क्षेत्र में भाव–प्रवणता के साथ व्यस्त रहकर उनमें भागीदारी निभाते थे। एक राष्ट्रवादी के रूप में, वे प्रथम विश्वयुद्ध के दौरान सैन्य सेवा हेतु स्वेच्छया सेना में भर्ती हुए, बेशक वह उस समय वे पचास वर्ष के थे। वे, तथापि, जर्मन नेतृत्व एवं युद्ध–नीतियों के गहन आलोचक थे और राजनीतिक व्यवस्था के कायापलट के पक्षधर थे, जिसने उन्हें शासन अवसर्जन के विरुद्ध बहुत अलोकप्रिय थे। वर्ष 1918 में, प्रथम विश्वयुद्ध में जर्मनी की करारी हार के पश्चात्, वेबर ने राजनीति में मिताचार की बात कही और एक नए संविधान का प्रारूप तैयार करने व जर्मन डेमोक्रेटिक पार्टी की स्थापना करने में मदद की। उन्हें सामाजिक एवं राजनीतिक कारणों का पक्षधर बताया जाता है, जो कि लोकप्रिय अथवा मुख्यधारा में नहीं थे। अतः उन्हें तात्कालिक राजनीतिक अभिजात वर्ग द्वारा शंका की दृष्टि से ही देखा गया। आइए, वेबर की राजनीतिक अभिरुचियों को जानने के लिए बॉक्स 7.2 पर नजर डालें।

बॉक्स 7.2 वेबर की राजनीतिक अभिरूचियाँ

''मैक्स वेबर की नियुक्ति फ्राइबर्ग विश्वविद्यालय में अर्थशास्त्र के प्रोफेसर के रूप में हुई थी। यहाँ वेबर की अनेकों वार्ताओं तथा भाषणों से उनकी महान विद्वता के दर्शन हुए। वर्ष 1895 में *द नेशनल स्टेट एण्ड इकॉनमिक पॉलिसी* पर दिए गए उनके भाषण पर अनेकों विद्वानों का ध्यान आकर्षित हुआ। वर्ष 1896 में वेबर को हाइडलबर्ग में अर्थशास्त्र के प्रोफेसर के रूप में नियुक्त किया गया। धीरे–धीरे वहाँ के बुद्धिजीवियों में उन्हें एक प्रमुख स्थान प्राप्त हो गया। इस दौरान क्रिस्चियन सोशल पॉलिटिकल सर्कल में सक्रिय होकर वेबर ने राजनीति में रुचि लेना प्रारंभ कर दिया। वेबर ने उस समय जर्मनी की सामाजिक–राजनीतिक परिस्थितियों पर अनेकों लेख प्रकाशित किए।[...]

वेबर राष्ट्रवादी थे। जब प्रथम महायुद्ध प्रारंभ हुआ तो उस समय वे 50 वर्ष के थे। यद्यपि वेबर राष्ट्रवादी थे, वे जर्मन नेताओं की युद्ध–नीतियों से संतुष्ट नहीं थे। उन्होंने युद्ध के संचालन तथा जर्मनी के नेतृत्व की अनुपयुक्तता की कटु आलोचना की। परंतु सत्ता में आए हुए नेताओं ने उनके विचारों तथा सलाह को कभी नहीं माना। वास्तव में वेबर द्वारा जर्मनी की राजनीति संरचना में पूर्ण परिवर्तन का समर्थन करने के लिए सरकार ने उन पर अभियोग चलाने का इरादा किया। तथापि, सभी प्रकार की धमकियों तथा चुनौतियों के बावजूद वेबर जर्मनी के उदारवादी राजनीतिक व्यवस्था का समर्थन करते रहे।

वर्ष 1918–1920 की अवधि में वेबर ने सक्रिय राजनीति के क्षेत्र में प्रवेष किया। वे दूश डेमोक्रेटिश पारतेई (Deutsche Demokratische Partei) के संस्थापक

सदस्य बन गये। वर्ष 1919 में वर्साई शांति सम्मेलन (Versailles Peace Conference) में वे जर्मनी के प्रतिनिधि मंडल के सलाहकार तथा जर्मनी का नया संविधान लिखने के प्राथमिक काम में सहभागी बन गये। इस काल में उन्होंने जर्मन राजनीतिक व्यवस्था के लोकतंत्रीय लक्ष्य की तर्कसंगत व्याख्या करने के लिए अनेकों छात्रों तथा शैक्षिक समूहों के बीच भाषण दिए। बहरहाल, मैक्स वेबर के राजनीतिक विचारों और गतिविधियों का एक ओर तो सत्ता में आए जर्मन नेताओं तथा दूसरी ओर वामपंथियों द्वारा ज़बरदस्त विरोध हुआ।'' (खण्ड परिचय, खण्ड 4, ईएसओ 13:5–7 से अनुकूलित)

वेबर ने अपने समय के लगभग सभी समसामयिक विशयों एवं वाद–विवाद में भाग लिया और उनके काम ने उस काल के समाज और इतिहास में हो रहे भारी बदलाव को आत्मसात् किया। जैसा कि हमने ऊपर चर्चा की, वेबर का काम कार्ल मार्क्स के काम से बड़े ही रोचक रूप से भिन्न था, जहाँ परवर्ती की इतिहास संबंधी भौतिकवादी संकल्पना आर्थिक संकल्पवाद से पहचानी जाती थी। इसके विपरीत, वेबर ने भौतिक अस्तित्व की सीमाओं को रूपादित करने में मूल्यों एवं मान्यता व्यवस्थाओं की मौलिक भूमिका का सिद्धांत प्रस्तुत किया और मार्क्सवादी प्रतिमान का एक दोषनिवारक समाधान प्रदान किया। अब हम कुछ ऐसे मुख्य विचारों पर चर्चा करेंगे जिन्हें उनकी कृतियों के दार्शनिक आधार के रूप में देखा जा सकता है।

7.4 मैक्स वेबर के लेखन पर अन्य विचारकों के प्रभाव

वेबर के कार्य को समुचित रूप से उस बौद्धिक संदर्भ के आलोक में समझा जा सकता है। जिससे उसका उद्‌गमन हुआ। आइए, अब हम वेबर को प्रभावित करने वाले बौद्धिक विचारों पर नजर डालें।

7.4.1 प्राकृतिक विज्ञान, सामाजिक विज्ञान और समाजशास्त्र की विषयवस्तु की समीक्षा

उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में जर्मनी के दार्शनिक वातावरण में संभवतः विश्व में उच्चतर शिक्षा की सर्वोत्तम प्रणाली थी, और प्राकृतिक विज्ञान–शास्त्रों (भौतिकी, रसायनशास्त्र, शारीरिकी) के साथ–साथ दर्शनशास्त्र, विधिशास्त्र, धर्मशास्त्र एवं इतिहास जैसी अन्य विषय–क्षेत्रों में भी शोध के उच्चतम मानक मौजूद थे। प्राकृतिक विज्ञान–शास्त्र अथवा *नत्रू विसेनशाफ्ट* उन शास्त्र–विधाओं के सन्निकट ही था जो *गायस्तेस्विसेनशाफ्ट* एवं *कल्चर–विसेनशाफ्ट* अर्थात् मानव–संस्कृति एवं मानव–व्यवहार विज्ञान–शास्त्रों से सरोकार रखते थे। जैसा कि हमने इस पाठ्यक्रम की पिछली इकाइयों में पढ़ा, सटीक भविष्यवाणियाँ करने पर अभिलक्षित प्राकृतिक विज्ञान–शास्त्र तथा आनुभाविक प्रेक्षणों पर आधारित सामान्यीकरण, तदनुसार, 'यथार्थ' विज्ञान–शास्त्र माने जाते हैं। प्रत्यक्षवादी विश्व दृष्टिकोण, खासकर इंग्लैंड और फ्रांस, ने भी यह कहा कि सामाजिक अथवा सांस्कृतिक परिघटनाओं के अध्ययन को प्राकृतिक विज्ञान–शास्त्रों के सिद्धांत से ही मार्गदर्शन मिलना चाहिए। तथापि, जर्मनी में अनेक विद्वानों ने इस दृष्टिकोण को निरस्त किया और सामाजिक परिघटनाओं की प्रासंगिक एवं ऐतिहासिक रूप से विशिष्ट प्रकृति और उन तरीकों, जिनसे वे काल, स्थान एवं ऐतिहासिक परिस्थितियों में भिन्नता दर्शाते हैं, पर जोर दिया। उदाहरण के लिए, आर्थिक परिघटनाओं का अध्ययन करने के लिए, ब्रिटिश अथवा ऑस्ट्रेयाई विद्वान निगमनात्मक तर्कणा का प्रयोग कर बुद्धिपरक 'आर्थिक मनुष्य' की

अवधारणा को लेकर काम करते थे ताकि वे दर्शा सकें कि किस प्रकार ऐसा कोई अभिकर्ता विशिष्ट ऐतिहासिक दशा अथवा समाज में प्रचलित आदर्शों एवं मूल्यों पर ध्यान दिए बिना ही, उपयोगिता को अधिकतम करने का प्रयास कर सकता है। अर्थशास्त्र की 'ऐतिहासिक विचार–पद्धति' के जर्मन विद्वानों नें, दूसरी ओर, मानव–व्यवहार को प्रभावित करने वाली विभिन्न सामाजिक, राजनीतिक व अन्य परिस्थितियों तथा किसी काल विशेष में किसी स्थान विशेष पर अपने क्रियाकलापों को अभिकर्ताओं द्वारा दिए गए विभिन्न अर्थों का अध्ययन कर, उपलब्ध आँकड़ों को एक साथ पिरो कर आर्थिक परिघटनाओं के विज्ञान आगमनात्मक रूप से तैयार करने का प्रयास किया (पॉजी, 2006)।

व्याख्या की उक्त दो शैलियाँ सामाजिक एवं सांस्कृतिक परिघटनाओं का अध्ययन करने हेतु उपयुक्त विधि, और खासकर इन परिघटनाओं के अध्ययनकर्ता व्यक्ति के विशिष्ट मूल्यों एवं अधिमानों के महत्व के विषय में जर्मन विद्वानों के बीच जीवंत एवं निरंतर चर्चा और तर्क–वितर्क में परिणत हुईं। वेबर की ऐसे तर्क–वितर्क में एक महत्वपूर्ण भूमिका थी। उन्होंने इस प्रत्यक्षवादी अवधारणा को निरस्त किया कि प्राकृतिक एवं सामाजिक विज्ञान–शास्त्रों के संज्ञानात्मक उद्देश्य मूलतः एक ही हैं। उन्होंने उस जर्मन इतिहासवादी दृष्टिकोण को भी चुनौती दी जिसमें कहा गया था कि मानवीय क्रियाकलाप का प्रकृति की सही–सही भविष्यवाणी कर पाना अथवा उसे सामान्यीकृत कर पाना असंभव होता है क्योंकि मानव–व्यवहार प्राकृतिक जगत के नियमों के समान ही किसी प्रकार के कानूनों से नियंत्रित नहीं होता। उनका कहना था कि वैज्ञानिक विधि सदैव अमूर्तिकरण एवं सामान्यीकरण का सहारा लेती है। साथ ही, मानवमात्र, एवं उसके क्रियाकलापों को समझने के लिए उनके कारणों को भी समझना आवश्यक होता है, जो कि बहिर्मुखी या प्रकट व्यवहार की भाँति अवलोकनीय नहीं होते। वेबर ने एक ऐसी क्रियाविधि प्रस्तुत करने में अहम भूमिका निभाई जो सामाजिक वैज्ञानिकों को सामाजिक यथार्थ की कृत्रिम प्रकृति को सामाजिक अभिकर्ता अथवा समाज में रहने वाले व्यक्तियों के साथ–साथ सामाजिक स्तर पर वृहत्तर अथवा समष्टिक प्रक्रियाओं के परिप्रेक्ष्य में इन्हें समझने में भी सक्षम करती है। विशेष रूप से, समाजशास्त्रीय शोध में मूल्य निर्णयों की भूमिका विषयक उसके विचार एक महत्वपूर्ण क्रमबद्ध एवं दार्शनिक योगदान रहे है।

जैसा कि हमने ऊपर देखा, वेबर का सरोकार विज्ञान एवं इतिहास से जुड़े वाद–विवाद से रहा, और उन्होंने समाजशास्त्र के लिए एक ऐसी नींव रखने का प्रयास किया जो वैयक्तिकता और सामान्यता दोनों को ध्यान में रखे। जर्मन आदर्शवादी परम्परा, जिसके प्रमुख प्रस्तावक दार्शनिक इमैनुएल कैन्ट रहे, ने मानव अस्तित्व के जैविक अथवा भौतिक आयाम और आध्यात्मिक अथवा आदर्शवादी आयाम के बीच स्पष्ट रूपरेखा वाला भेद दर्शाया। इन प्रभावों को कार्य–प्रणाली, समझ एवं सामाजिक कार्रवाई के प्रति वेबर के दृष्टिकोण में देखा जा सकता है। चूँकि विचारक स्वतंत्र नागरिक होते हैं, वे विचारों के अधिकारक्षेत्र में स्वतंत्ररूप से भागीदारी निभा सकते हैं और अपने विकल्प एवं प्रभाव का प्रयोग कर सकते हैं। तदनुसार, भौतिक एवं प्राकृतिक जगत का अध्ययन करने हेतु उपयुक्त विधियाँ और प्रकृति के नियमों का अनुपयोग मानव समाज का अध्ययन करने हेतु अनुपयुक्त थे। अतः मानव मात्र और उसकी संस्कृति एवं इतिहास को समझने के लिए मानवीय क्रियाकलापों के पीछे कारणों की सुस्पष्ट समझ और समस्त सांस्कृतिक प्रतिमानों की समझ अनिवार्य थी।

जर्मन दार्शनिकों विल्हम विंदीबांड, हेन्रिच रिकर्ट एवं विल्हम डिल्थी ने वेबर को बेहद प्रभावित किया। विंदीबांड का मानना था कि प्राकृतिक एवं सांस्कषतिक विज्ञान–शास्त्रों

के लक्ष्य एवं उद्देश्य भिन्न–भिन्न होते हैं। जबकि पूर्ववर्ती सर्वप्रयोजन नियम बनाने पर अभिलक्षित थे, यथा अपने कार्यक्षेत्र में 'नियमान्वेशी' (nomothetic) थे; परवर्ती अद्वितीय परिघटनाओं की कहीं अधिक विशिष्टतावादी समझ पर अभिलक्षित थे, अर्थात् वे भावसूचक (idiographic) थे। डिल्थी का मानना था कि मानव समाज और संस्कृति का अध्ययन समुचित रूप से किए जाने के लिए उसका अध्ययन किसी भौतिक अथवा प्राकृतिक परिघटना की भाँति बाहर से ही कर लेना पर्याप्त नहीं होगा, बल्कि अनुभव एवं आत्मनिष्ठ बोध के माध्यम से भीतर से किया जाना चाहिए। दूसरे शब्दों में, सामाजिक वैज्ञानिक को अध्ययन की विषय–वस्तु अर्थात् व्यक्ति के स्थान पर स्वयं को रखकर देखना चाहिए और उसके अनुभवों को समझने अथवा पुनः अनुभव करने का प्रयास करना चाहिए, और इस प्रकार उन्हें सहानुभूतिपूर्वक समझना चाहिए। वेबर की *फर्स्टेहन* अथवा 'सहानुभूतिपूर्ण समझ' डिल्थी के संरूपण से गहरे तरीके से प्रभावित थी। तथापि, सहानुभूतिपूर्ण समझ को उन्होंने एक ऐसी परिघटना के समाजशास्त्रीय विश्लेषण में प्रथम चरण के रूप में ही देखा जिसका अनुसरण एक ऐसी कारणात्मक व्याख्या द्वारा किया जाना था जो प्राकृतिक विज्ञानों की प्रत्यक्षवादी एवं आनुभाविक परम्परा के नजदीक थी। *फर्स्टेहन* से वेबर का क्या अभिप्राय था, इस विषय का अध्ययन हम और अधिक इकाई 12 में करेंगे।

7.4.2 कारणता और संभाव्यता

प्रायः यह गलतफहमी देखने में आती हैं कि वेबर ने, जर्मन आदर्शवादी परम्परा के चलते, कारणता की अवधारणा को निरस्त किया, वैसे यह सही नहीं है क्योंकि वेबर का ऐतिहासिक के साथ–साथ समाजशास्त्रीय कारणता में भी दृढ़ विश्वास था। बहरहाल, चूँकि सामाजिक जगत जैसी जटिल किसी भी चीज से सीधे–सीधे कारणात्मक संबंध स्थापित करना अत्यंत दुष्कर कार्य होता है, वेबर ने उसकी बजाय 'संभाव्यता' की संकल्पना का प्रयोग किया। संभाव्यता का अर्थ है कि किसी ज्ञात सामाजिक दशा में, मनुष्य किसी ऐसी रीति विशेष में प्रत्युत्तर देने की संभावना रखता हैं जिस पर समाज के मानदंडों का नियंत्रण हो। फिर भी, सभी अभिकर्ताओं के लिए ऐसा पूर्ण सुनिश्चितता के साथ आवश्यक नहीं हैं, क्योंकि कुछ ऐसी अद्वितीय परिस्थितियाँ भी हो सकती हैं जो उनके भिन्न रूप से व्यवहार करने अथवा कार्य करने में परिणत हों। वेबर ने ऐतिहासिक कारणता और समाजशास्त्रीय संभाव्यता के बीच भेद किया है। ऐतिहासिक कारणता का अर्थ होता है– वे अद्वितीय कारण जो किसी घटना विशेष को जन्म देते हैं; जबकि समाजशास्त्रीय संभाव्यता का अर्थ होता है–परिघटनाओं के बीच संबंध अथवा अंतः संबंध। कारणता सिद्ध करने में अपेक्षित होता है कि हम 'मानसिक प्रयोग' करें। उदाहरण के लिए, हम कह सकते हैं कि ब्रिटिश सेना द्वारा दिए जाने वाले कारतूसों में पशु–चर्बी का प्रयोग सन् 1857 के सैन्य विद्रोह में परिणत हुआ। तब हम स्वयं से सवाल करते हैं– यदि यह बगावत कारतूसों के मुद्दे के बिना हुई होता तो? यदि हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि सन् 1857 का विद्रोह इस घटना के बगैर भी हो सकता था, क्योंकि बगावत करने वालों के बीच अंसतोष का स्तर और उत्पीड़न का एहसास बहुत गहन हो चला था, तब हम इसे कारणात्मक कारक मानने से इंकार कर सकते हैं। समाजशास्त्रीय कारणात्मकता की दृष्टि से, वेबर ने सम्भाव्यवादी प्राधार प्रयोग किए। उदाहरण के लिए, पूँजीवाद के उद्गमन विषयक अपने प्रसिद्ध शोध–प्रबंध में, वेबर में यह मत प्रस्तुत किया कि एक निश्चित प्रकार के व्यक्तित्व की आवश्यकता थी, जिसे प्रोटेस्टेंट शिक्षाओं द्वारा आधार प्रदान किया गया। यह प्रस्थापना तब सिद्ध होती है तब मानसिक प्रयोगों के माध्यम से अथवा विभिन्न संस्कृतियों में तुलनात्मक अध्ययन के द्वारा, समाजशास्त्री यह

दर्शाने में सक्षम होता है कि पूँजीवाद संभवतः ऐसे व्यक्तित्वों के बिना विकसित ही न हुआ होता। तदनुसार, प्रोटेस्टेंट नीति–शास्त्र को पूँजीवाद के विकास हेतु किसी एक कारण के रूप में देखा जा सकता है, न कि एकमात्र कारण के रूप में। हम देख सकते हैं कि वेबर ने कारणात्मक विश्लेषण पर आधारित एक कठिन वैज्ञानिक विधि वाली सामाजिक एवं ऐतिहासिक परिघटनाओं की काल्पनिक एवं व्याख्यात्मक समझ समन्वित करने का प्रयास किया। वस्तुतः, अपनी कृति *इकॉनमी एंड सोसाएटी* के पहले ही पृष्ठ पर वेबर ने समाजशास्त्र को इन शब्दों में परिभाषित किया हैं– 'वे विज्ञान जो सामाजिक व्यवहार को स्पष्टतः समझने को लक्ष्य बनाकर चलता है और इस प्रकार उसकी प्रक्रिया एवं परिणामों की एक कारणात्मक व्याख्या प्रस्तुत करता हैं, (बोगार्डस, 1960:477)। जबकि समाजशास्त्र समाज एवं इतिहास के आनुभाविक विश्लेषण से संबद्ध होना ही चाहिए, समाजशास्त्र की विधि प्राकृतिक विज्ञान–शास्त्रों की विधि से भिन्न होनी चाहिए। समाजशास्त्रीय विश्लेषण के तहत सामाजिक अंतःक्रिया के किसी प्रसंग में ही सामाजिक कार्रवाई की परीक्षा की जाएगी, और यह व्याख्यात्मक होनी चाहिए–लोगों के महज अपने कार्यक्षेत्र से बाहर निर्वैयक्तिक शक्तियों द्वारा प्रेरित वस्तुओं के रूप में न देखते हुए।

सामाजिक व्यवहार अथवा मानवीय क्रियाकलापों को समझने के लिए यह अत्यावश्यक होगा कि सामाजिक–वैज्ञानिक इन मूल्यों एवं मान्यताओं में संलग्न हो जो समाज में मनुष्यों के व्यवहार में अंतर्निहित हों। साथ ही, शोधकता स्वयं ही अपने निजी व्यक्तिगत मान्यताओं, अनुस्थापनाओं एवं मूल्यों को पटल पर रखता है, जो उस तरीके को प्रभावित कर सकता हैं जिससे वे स्वयं वास्तविकता का अर्थ लगाते हों व समझते हों। वेबर इसको अलाभ के रूप में नहीं देखते हैं। वास्तव में, सामाजिक विज्ञान–शास्त्रों में शोध के तहत न केवल बाहर से ही घटनाओं का घटना देखा जाता है, बल्कि इससे उन प्रयोजनों, मूल्यों एवं अनुस्थापनाओं की कहीं अधिक गहरी समझ में भी योगदान मिलता है जो इन घटनाओं को प्रभावित करती हैं। पॉजी (2006) लकड़ी के लट्ठे काटने वाले एक व्यक्ति का उदाहरण देते हैं। कोई शोधकर्ता लकड़ी काटने वाले व्यक्ति के बाह्य क्रियाकलापों का वर्णन एक उद्देश्यपरक, बाह्य गतिविधि के रूप में कर सकता है। परंतु इस क्रियाकलाप हेतु अंतर्निहित प्रयोजनों को देखते हुए, वह शोधकर्ता मानकर चल सकता है कि उसे सर्दियों के लिए ईंधन तैयार करने की आवश्यकता होगी, अथवा इस भौतिक क्रियाकलाप के माध्यम से वह स्वयं को चुस्त–दुरुस्त रखता होगा, अथवा वह अपने पड़ोसी पर गुस्सा उतारने की बजाय लकड़ी काटकर अपना गुस्सा उतार रहा है। तदनुसार, हम देखते हैं कि वेबर ने सामाजिक विज्ञान में एक 'लेख्य' परंपरा विकसित करने में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई, जो कि सामाजिक संबंधों एवं प्रक्रियाओं के आरंभ बिंदु के रूप में वैयक्तिक आत्मपरकता की भूमिका पर जोर देती हैं।

7.4.3 सामाजिक विज्ञान में वस्तुपरकता एवं मूल्य

वेबर को यह स्पष्ट था कि समाजशास्त्र के पूर्ववर्ती संस्थापकों से भिन्न, समाज के 'वस्तुपरक' विज्ञान जैसी कोई चीज़ नहीं होती। जैसा कि हमने ऊपर उल्लेख किया, वेबर के प्रमुख सरोकारों में एक था– विज्ञान एवं मानवीय क्रियाकलाप के बीच का संबंध। सामाजिक व्यवहार को समझने में मूल्यों के महत्व पर जोर देते समय, उन्होंने समान रूप से यह भी स्पष्ट किया कि समाजशास्त्री का व्यक्तिगत मूल्यांकन अध्ययन के अधीन समाज एवं प्रक्रियाओं के विश्लेषण से भिन्न ही होना चाहिए। उन्होंने 'मूल्य–प्रासंगिकता' एवं 'मूल्य–तटस्थता' के बीच अंतर स्पष्ट किया। दूसरे शब्दों में,

यदि कोई शोधकर्ता अपनी रुचि अथवा मूल्य–अनुस्थापनों की वजह से अन्वेषण हेतु कोई समस्या विशेष चुन भी ले तो पूछताछ की प्रक्रिया एवं विचाराधीन परिघटना का अध्ययन नियमनिष्ठतः विज्ञान के मूल्य–तटस्थ सिद्धांतों के अनुसार होना चाहिए। इसे ऐसे भी कह सकते हैं कि शोधकर्ता अपनी निजी विचारधारा अथवा मूल्य–पद्धति के अनुरूप बनाने के लिए निष्कर्षों को तोड़–मरोड़ अथवा छलयोजित नहीं कर सकता। मूल्य–तटस्थता 'तथ्यों' एवं 'मूल्यों' के बीच अंतर पर प्रकाश डालती है; वेबर का मानना था कि कोई भी आनुभविक विज्ञान कभी भी किसी व्यक्ति को यह नहीं सुझा सकता कि वे क्या करें; तथापि, वे उस व्यक्ति को यह स्पष्ट कर सकता हैं कि वे क्या कर सकता हैं अथवा क्या करना चाहता हैं। देंखे (कोसर 1977:221–222)। वेबर के अनुसार वैज्ञानिक की भूमिका नैतिक वाद–विवादों में लगें रहना अथवा पैगम्बरों या ऋषि–मुनियों की भाँति पेश आने की नहीं हैं, बल्कि तथ्यों एवं उनके अंतसंबंधों पर प्रकाश डालने की है। आइए, सामाजिक विज्ञान–शास्त्रों में मूल्यों का स्थान समझने के लिए बॉक्स 7.3 पर नज़र डालें।

बॉक्स 7.3 सामाजिक विज्ञान में मूल्य

''विज्ञान को बहुधा सत्य के लिए 'वस्तुपरक' खोज कहा गया है। इसे मूल्य–विमुक्त और निष्पक्ष माना गया है। अपने देखा कि किस प्रकार दर्खाइम सामाजिक तथ्यों के वस्तुनिष्ठ अर्थात् केवल तथ्यों पर आधारित अध्ययन की बात करते है और किस प्रकार समाजशास्त्रियों को स्वयं को पूर्वाग्रहों और पूर्व–कल्पनाओं से मुक्त रहने को कहते हैं। क्या 'वस्तुपरक और 'मूल्य–विमुक्त' विज्ञान (प्राकृतिक या सामाजिक विज्ञान) वास्तव में संभव है? वेबर के अनुसार, अध्ययन के लिए विषय विशेष चुनने में मूल्यों की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। आपने समाजशास्त्र को ही पाठ्यक्रम के लिए क्यों चुना? कुछ मूल्यों ने निश्चय ही आपका मार्ग–दर्शन कराया होगा। आपने या तो इसे रोचक पाया, या आसान या संभवतः आपको अन्य वैकल्पिक पाठ्यक्रम पसंद नहीं आए। इसी प्रकार माना कि यदि कोई वैज्ञानिक परमाणु अथवा जीवन का और ग्रामीण भारत के रीति–रिवाजों का अध्ययन करना चाहे तो उसका मार्गदर्शन कुछ विशिष्ट मूल्य–उन्मुखताओं द्वारा ही किया जाएगा।

किन्तु वेबर ने मूल्य–उन्मुखता और मूल्य–निर्णयन के बीच स्पष्ट अंतर किया है। एक शोधकर्ता या वैज्ञानिक किसी विषय विशेष के अध्ययन के लिए कुछ मूल्य– उन्नमुखताओं के मद्देनजर दिशा–निर्देशित हो सकता है, किन्तु वेबर के अनुसार उसे उस विषय पर किसी प्रकार का नैतिक निर्णय नहीं देना चाहिए। उसे उस विषय के संबंध में नैतिक तटस्थता ही बरतनी चाहिए। उसका काम तथ्यों का अध्ययन करना है, न कि यह निर्णय देना कि वे 'अच्छा' या 'बुरा' है।[...]

वेबर के अनुसार समाजशास्त्रियों को मनुष्य की अभिप्रेरणा को समझकर अंतर्दृष्टि अथवा व्यक्तिगत बोध से उसका अध्ययन करना चाहिए। समाज और संस्कृति को समझने में समाजशास्त्री का स्वयं समाज का भाग होना सहायक सिद्ध होता है क्योंकि समाजशास्त्री द्वारा सामाजिक तथ्यों का अध्ययन समाज के अंदर से ही किया जा सकता है। आदर्श प्ररूप और ऐतिहासिक तुलना द्वारा कार्य कारणात्मक संबंध भी खोजे जा सकते हैं। किन्तु नैतिक तटस्थता बनाए रखना आवश्यक होता है।'' (''ईएसओ 13, खण्ड 5:16–17 से अनुकूलित)

बोध प्रश्न 1

1. बताइए कि निम्नलिखित कथन सत्य हैं अथवा 'असत्य' –

   क) मैक्स वेबर का दृढ़ विश्वास था कि प्राकृतिक एवं सामाजिक विज्ञान के संज्ञानात्मक उद्देश्य मूलतः एक ही होते हैं। (   )

   ख) वेबर की विचारधारा ने सामाजिक संबंधों एवं प्रक्रियाओं के प्रारंभिक बिंदु के रूप में वैयक्तिक आत्मपरकता की भूमिका पर जोर दिया। (   )

2. वेबर के नजरिए से 'मूल्य प्रासंगिकता' एवं 'मूल्य तटस्थता' के बीच अंतर स्पष्ट कीजिए।

7.5 मुख्य विचार

आइए, वेबर के लेखों में निहित कुछ प्रमुख विचारों को समझें।

7.5.1 आदर्श प्ररूप

वेबर ने उन तथ्यात्मक आँकड़ों एवं स्पष्टतः परिभाषित संकल्पनाओं के विकास की कड़ी जाँच–पड़ताल कर शोधकर्ता द्वारा अपने निर्णयों को 'तथ्य–निर्णयों' से अलग रखे जाने पर जोर दिया जो अब हमें विशिष्ट परिस्थितियों के तहत किसी सामाजिक परिघटना के विभिन्न संरूपणों को समझने में मदद करते हैं। इसने उन्हें 'आदर्श प्ररूप' संबंधी अपना ही संरूपण विकसित करने की ओर प्रवृत किया, जिसके विषय में हम इस पाठ्यक्रम की एक अन्य इकाई में विस्तार से पढ़ेंगे। आदर्श प्रारूप एक ऐसा क्रमबद्ध साधन है जिसमें शोधकर्ता द्वारा किसी परिघटना के सबसे प्रमुख अभिलक्षणों को निष्कर्ष रूप में लेकर, अध्ययन की जाने वाली वास्तविकता के किसी प्रतिमान अथवा प्रारूप को संरूपित किया जाता है। यह 'वास्तविक' और 'आदर्श' के बीच समानताओं एवं भिन्नताओं की तुलना हेतु मानदण्ड के रूप में काम करता है, और शोधकर्ता को किसी परिघटना विशेष अथवा अभिभावी होती घटना की ओर अग्रसर करने वाली दशाओं, अथवा किसी परिघटना विशेष के उद्गमन से प्राप्त होने वाले निष्कर्षों से अनुबद्ध करती प्राक्कल्पनाएँ रचने में सक्षम करता है। उदाहरण के लिए, यदि आप किसी समाज में संसदीय लोकतंत्र की प्रकार्यात्मकता का अध्ययन करना चाहें तो आपको यह सलाह दी जा सकेगी, वेबर के अनुसार, कि आप उसके प्रमुख अभिलक्षणों को निष्कर्ष रूप में लेकर और उसके सर्वाधिक महत्वपूर्ण पहलुओं का कोई प्रतिमान अथवा छवि तैयार कर संसदीय लोकतंत्र के किसी आदर्श प्रारूप को रचें। फिर इस 'आदर्श प्ररूप' के साथ आनुभविक वास्तविकता की तुलना कर, आप उसके उद्गमन हेतु ऐतिहासिक कारणों की गहरी जानकारी प्राप्त करने के साथ–साथ इस बात को भी बेहतर समझ पाएँगे कि यह किसी विशिष्ट सामाजिक–ऐतिहासिक प्रसंग में वस्तुतः कैसे काम करती है। आदर्श प्ररूपों के विषय में और अधिक हम अगली इकाई में पढ़ेंगे।

7.5.2 सामाजिक क्रिया

मैक्स वेबर ने समाजशास्त्र को सामाजिक क्रिया–व्यापार के एक व्यापक विज्ञान–शास्त्र के रूप में लिया। यह उनके कार्य के दार्शनिक आधारों को समझने में एक निर्णायक कारक सिद्ध होता है। इस अर्थ में, वे मार्क्स एवं दर्खाइम जैसे दार्शनिकों से भिन्न दिशा में गये जिन्होंने, जैसा कि हम पढ़ चुके हैं, मानव व्यवहार को रूपायित करने में व्यक्ति

की बजाय सामाजिक प्राधार पर अधिक जोर दिया। वेबर का समाजशास्त्रीय कार्य निम्नलिखित के बोध से जुड़ा था– ''वे आत्मपरक अर्थ जो मानव अभिकर्ता विशिष्ट सामाजिक–ऐतिहासिक प्रसंगों के भीतर अपने पारस्परिक अनुस्थापनों में अपनी कार्रवाइयों या क्रिया–व्यापार को देते हैं'' (कोसर, 1977ः 217)। दर्खाइम एवं मार्क्स की तुलना में, वेबर ने मानव व्यवहार उन्मुखता में मूल्यों एवं संस्कृति की भूमिकाओं पर भी जोर दिया। जबकि दर्खाइम ने समाज और उन 'सामाजिक तथ्यों' पर ध्यान केन्द्रित किया जो बाह्यता के साथ–साथ बाध्यता भी दर्शाते थे, वेबर ने व्यक्ति–विशेष एवं उनकी कार्रवाईयों पर भी ध्यान केन्द्रित किया; और जबकि मार्क्स का मानना था कि विचार जगत की अपेक्षा भौतिक जगत कहीं अधिक महत्वपूर्ण है, वेबर का कहना था कि विचार ही वे प्रेरक कारक हैं जो व्यक्तियों के क्रिया–व्यापार या क्रियाकलापों को आकार प्रदान करते हैं।

दर्खाइम का सरोकार उन संस्थागत व्यवस्थाओं से रहा जो सामाजिक प्राधारों की संसक्ति को कायम रखती हैं, जबकि मार्क्स ने वर्ग–संघर्षों और परिवर्तनशील सामाजिक एवं आर्थिक प्राधारों पर अपना ध्यान केन्द्रित किया। ''इसके विपरीत, वेबर का ध्यान खासकर उन आत्मपरक अर्थों पर रहा जो मानव अभिकर्ता विशिष्ट सामाजिक–ऐतिहासिक प्रसंगों के भीतर अपने पारस्परिक अनुस्थापनों में अपनी कार्रवाइयों को देते हैं।'' (वही, पृ. 217)। वेबर ने चार मुख्य प्रकार की सामाजिक क्रिया–व्यापार को पहचाना–परम्परागत व्यापार, संवेगात्मक, भावात्मक व्यापार, मूल्योन्मुखी युक्तियुक्त क्रिया–व्यापार, तथा लक्ष्योन्मुखी युक्तियुक्त क्रिया–व्यापार। जबकि परम्परागत क्रिया–व्यापार समाज के मूल्यों एवं रीति–रिवाजों पर आधारित होता है, भावात्मक क्रिया–व्यापार किसी काल विशेष में व्यक्ति की भावात्मक मनोदशा पर निर्भर करता है। युक्तियुक्त क्रिया–व्यापार विवेकपूर्ण साधनों का प्रयोग कर कुछ निश्चित लक्ष्यों का अनुसरण आवश्यक बना देता है। मूल्योन्मुखी युक्तियुक्त क्रिया–व्यापार में लक्ष्यप्राप्ति हेतु अभिकल्पित प्रार्थना, मनन आदि माध्यमों से ऐसे कुछ मूल्यों अथवा लक्ष्यों का अनुसरण शामिल होता है जो संभवतः 'युक्तियुक्त' न हों, जैसे आध्यात्मिक लक्ष्य। अंततः, लक्ष्योन्मुखी युक्तियुक्त कार्य–व्यापार को, जिसमें लक्ष्य एवं साधनों को विवेकपूर्ण तरीके से चुना जाता है (जैसे– सर्वाधिक दक्ष साधनों का प्रयोग करके कोई प्राधार निर्माण करने वाला अभियंता), आधुनिक पश्चिमी समाज के अभिलक्षण परिभाषित करने वाले के रूप में लिया जाता है, जिसके विषय में वेबर ने व्यापक रूप से लिखा और सिद्धांत के रूप में प्रस्तुत किया। वेबर का कहना था कि सामाजिक जीवन के सभी क्षेत्रों में काम करने का यह प्रभेदक तरीका ही था जिसने आधुनिक पश्चिमी समाजों को गुणात्मक रूप से गैर पश्चिम समाजों से भिन्न बना दिया।

खण्ड 1 व 2 में आप पढ़ चुके हैं कि मार्क्स और दर्खाइम ने प्राधारात्मक परिवर्तन का संदर्भ देकर समाज में प्रमुख ऐतिहासिक उद्विकासवादी परिवर्तनों का किस प्रकार लेखा–जोखा देने का प्रयास किया; जैसे– यांत्रिक एकात्मकता से सावयवी एकात्मकता, जैसा कि दर्खाइम ने स्पष्ट किया। वेबर, बहरहाल, अपने विश्लेषण में मानवीय क्रिया–व्यापार का आयाम लेकर आए, और मानव इतिहास एवं समाज को समझने के लिए विश्लेषण की इकाई स्वरूप प्रत्यक्ष, कार्यशील व्यक्ति पर विचार किया। उसका व्याख्यात्मक समाजशास्त्र मूल इकाई अथवा परमाणु, और सार्थक व्यवहार के वाहक के रूप में व्यक्ति व उनके क्रिया–व्यापार पर ही विचार करता है।

वेबर ने सामाजिक परिवर्तन को समझने के लिए सामाजिक क्रिया–व्यापार के रूपों की प्रतीकात्मक व्याख्या प्रयोग की। वेबर का आधुनिक सभ्यता की समस्याओं से गहरा

सरोकार रहा। उनका मानना था कि परम्परागत से बुद्धिपरक क्रिया–व्यापार की ओर स्थानांतरण पूँजीवाद जैसी किसी भी बुद्धिपरक आर्थिक व्यवस्था के विकास में अत्यंत महत्वपूर्ण होता है; अर्थात् वह विषय–वस्तु जिसका उन्होंने अपने प्रसिद्ध विषय *द प्रोटेस्टेंट एथिक एंड द स्प्रिट ऑफ कैपिटलिज़्म* में अन्वेषण किया, जिसका उल्लेख हम पहले कर चुके हैं। इसका प्रयोग उन्होंने प्राधिकार की एक प्रतीकात्मक व्याख्या विकसित कर समाजों में सत्ता–संबंधों को समझने के लिए किया, अर्थात्–करिश्माई या चमत्कारी, परम्परागत एवं बुद्धिपरक–वैध। चमत्कारी प्रभुत्व 'चमत्कार' अथवा नेताओं व भविष्य दृष्टाओं के विशेष गुणों से व्युत्पन्न होता है; परम्परागत प्रभुत्व, जो कि पूर्व–आधुनिक समाजों का प्रतिनिधिक होता है, परम्पराओं के महत्व में विश्वास से व्युत्पन्न होता है; बहरहाल, यह 'बुद्धिपरक–वैध प्रभुत्व' ही है जो उन आधुनिक समाजों में अभिभावी होता है जो सरकार की एक आधुनिक व्यवस्था और एक सुविकसित प्रशासनिक अधिकारी–तंत्र रखते हैं।

7.5.3 तर्कसंगति एवं तर्कसंगतता

अनेक विद्वानों ने वेबर के काम को समझने के मूल–सिद्धांत स्वरूप तर्कसंगति एवं तर्कसंगतीकरण की मूल विषय–वस्तु पर लिखा है। तर्कसंगति से वेबर का अभिप्राय उन तर्कसंगत एवं सुसंगत विचारों एवं व्यवहार से रहा जो मानव क्रिया–व्यापार को नियंत्रित करते हैं। तर्कसंगतीकरण वे प्रक्रिया है जिसके द्वारा तर्कसंगति जीवन के विभिन्न पहलुओं में प्रयोग की जाती है। आइए, तर्कसंगति और तर्कसंगतीकरण का अर्थ विस्तार से समझने के लिए बॉक्स 7.4 पर नज़र डालें।

बॉक्स 7.4 तर्कसंगति और तर्कसंगतिकरण का अर्थ

वेबर के अनुसार, तत्कालीन जगत तर्कसंगति से ही अभिलक्षित है। उनका मानना था कि आधुनिक समाज को समझने की कुंजी उसके तर्कसंगत अभिलक्षणों एवं तर्कसंगत शक्तियों में ही मिलती हैं। उसके अनुसार, आधुनिक पाश्चात्य जगत तर्कसंगति से ही अभिलक्षित है। इसी के परिणामस्वरूप, मानव क्रिया सचेत गणना से निर्देषित होती है। परिमाणन, पूर्वानुमेयता एवं नियमितता महत्वपूर्ण हो जाते हैं। व्यक्तिजन अलौकिक मान्यताओं की अपेक्षा तर्क, कारण एवं गणना पर कहीं अधिक विश्वास करने लगते हैं। वेबर के अनुसार, तर्कसंगतीकरण का अर्थ है– ''सिद्धांततः ऐसी कोई रहस्यमय अगण्य शक्तियाँ नहीं होतीं जो सामने आती हों, परंतु फिर भी व्यक्ति, सिद्धांत रूप में, गणना द्वारा सभी चीजों पर नियंत्रण कर सकता है। अब किसी को प्रेतात्माओं को काबू करने या मनाने के लिए मायिक या जादूई साधनों का सहारा लेने की आवश्यकता नहीं है, जैसा कि बर्बर या असभ्य लोग किया करते हैं, क्योंकि उनके लिए ऐसी रहस्यमय शक्ति का अस्तित्व होता है'' (वेबर 1946:139, तुलना करें हर्न 1985:76)। आइए, एक उदाहरण लें। यदि कोई किसान अच्छी फसल लेना चाहता है तो वे पूजा–पाठ और यज्ञ–अनुष्ठान कराने में समय, ऊर्जा और धन खर्च कर सकता है। दूसरी ओर, वे यही प्रयास एवं व्यय सिंचाई के लिए नहर खुदवाने या ट्यूब–वैल लगवाने की दिशा में कर सकता है ताकि फसलें फलें–फूलें। पहली स्थिति में वे ''रहस्यमय अगण्य शक्तियों'' पर निर्भर है; दूसरी स्थिति में, वे तर्कसंगत गणना का प्रयोग कर रहा है।

> वेबर के अनुसार, तर्कसंगतीकरण पाश्चात्य संस्कृति के वैज्ञानिक विशिष्टीकरण और प्रौद्योगिकीय विभेदीकरण का परिणाम है। उन्होंने तर्कसंगतीकरण का वर्णन पूर्णता या निपुणता हेतु संघर्ष, जीवन–व्यवहार के सरल परिमार्जन के रूप में और बाह्य जगत पर प्रवीणता हासिल करने के रूप में किया (देखें फ्राएंड 1972:18)। मान्यताओं का रहस्यदूरीकरण और विचारों का धर्म–निरपेक्षीकरण तर्कसंगतीकरण के वे महत्वपूर्ण पहलू हैं जो विश्व पर आधिपत्य हासिल करने में सहायक सिद्ध होते हैं। तर्कसंगतीकरण में काननू बनाना और संगठन खड़े करना भी शमिल होता है। (ईएसओ 13, खण्ड 4:50 से अनुकूलित)

वेबर के अनुसार, आधुनिकता के अंतर्गत जीवन के सभी पहलुओं के तर्कसंगत क्रिया एवं तर्क संगतीकरण की संवृद्धि एवं प्रसार विश्व के 'मोहभंग' में परिणत हुआ। मानव जीवन इतना पूर्वानुमेय और नियमित हो जाता है कि वे अपना आकर्षण ही खो देता है। कोसर (1977:233) लिखते हैं–

''आधुनिकता का संसार, जिस पर वेबर ने बार–बार जोर दिया, देवताओं द्वारा परित्यक्त ही रहा है। मनुष्य ने उन्हें खदेड़ दिया है और जो पूर्वकाल में संयोगवश, बल्कि बोध, मनोभाव एवं प्रतिबद्धता द्वारा, व्यक्तिगत आकर्षण एवं वैयक्तिक निष्ठा द्वारा, लावण्य द्वारा और चमत्कारिक नायकों के नीति–शास्त्र द्वारा ही प्राप्त होते थे, गण्य एवं पूर्वानुमेय बना दिए गए हैं।'' वेबर ने इसको विभिन्न सामाजिक संस्थाओं संबंधी अपने अध्ययन–विषयों के माध्यम से चित्रांकित किया। धर्म के समाजशास्त्र में उसके अध्ययन, विषय धार्मिक जीवन का तर्क संगतीकरण दस्तावेज रूप में प्रस्तुत करते हैं। उसने कानून के दायरे में, राजनीतिक प्रभुत्व में, और यहाँ तक कि संगीत जगत में भी तर्कसंगतीकरण प्रक्रिया का अध्ययन किया– पाश्चात्य शास्त्रीय संगीत, एशिया एवं अफीका में संगीत की कहीं अधिक सहज पद्धतियों से भिन्न, अपनी प्रस्तुति के कठोर नियमों एवं मानवीकृत प्रक्रियाओं से अभिलक्षित हैं।

जैसा कि हमने ऊपर देखा, वेबर का भविष्य–निरूपण एक ऐसे जगत से जुड़ा है जो उच्च रूप से ऐसा नियमित और युक्तियुक्त हो कि हम अपनी ही युक्ति के दास या बंदी बन जाएँ– अपने ही बनाए किसी 'लोहे के पिंजरे' में फँस जायें। व्यक्तियों एवं समाज पर अधिकारी–तंत्र के इस लौह–पिंजरे के प्रभावों का विश्लेषण हमारा ध्यान आधुनिक पाश्चात्य समाजों की अधिकारी–तंत्रीय तर्कसंगत के उस तरीके की ओर खींचता है जो ऐसा नियंत्रण प्रयोग करता है कि जो मानव स्वतंत्रता और संभावनाओं को सीमांकित कर देता है। आधुनिक अधिकारी–तंत्र के युक्तियुक्त, संगठनकारी सिद्धांतों में पदानुक्रमिक भूमिकाओं की कोई व्यवस्था, ज्ञान के विशिष्टीकरण एवं विभागीकरण की कोई उच्च कोटि, नियमों एवं विनियमों पर आधारित 'योग्यता–आधारित' रोज़गार और कोई युक्तियुक्त–वैध प्राधिकरण प्राधार सम्मिलित हैं। यह युक्तियुक्त अधिकारी–तंत्रीय व्यवस्था, अधिकांश आधुनिक राज्यों के लिए सर्वमान्य, एक अपनी ही जिंदगी और वैधता विकसित कर लेती है तथा इस पर उन लोगों द्वारा कोई सवाल खड़ा नहीं किया जा सकता जिनकी सेवा किया जाना इससे अपेक्षित होता है। तदनुसार, यह वैयक्तिक स्वायत्तता एवं स्वतंत्रता को कुचलकर, सशक्त और सबल बनाने वाले की बजाय दबावकारी और सीमाकारी बन जाता है। मानवजाति का यह निराशावादी भविष्य–निरूपण चर्चा और बहस के लिए वर्तमान काल के शिक्षार्थियों के लिए रोचक होगा। खासकर किसी आधुनिक राज्य में रहने के उनके अपने अनुभवों के आलोक में।

7.5.4 धर्म और अर्थशास्त्र

आरंभ में, धर्म और अर्थशास्त्र के बीच कोई संबंध देख पाना कठिन प्रतीत होता है। हममें से अनेक तो सोचेंगे कि धार्मिक मान्यताओं और मूल्यों का आर्थिक क्रियाकलापों से कोई लेना–देना नहीं है। खैर, वेबर का विचार जरा हटकर था। आइए, धर्म एवं अर्थव्यवस्था विषयक वेबर का परिप्रेक्ष्य समझने के लिए बॉक्स 7.5 का संदर्भ लें।

बॉक्स 7.5 धर्म एवं अर्थशास्त्र विषय वेबर का परिप्रेक्ष्य

''वेबर के मतानुसार, मानव समाजों की अवधारणाएँ, मान्यताएँ, मूल्य तथा विश्व के प्रति दृष्टिकोण ही उनके सदस्यों के कार्यकलापों और यहाँ तक कि उनके आर्थिक क्षेत्र के कार्यकलापों का दिशा–निर्देशन करते हैं। जैसा कि हमने पहले पढ़ा हैं, धर्म मनुष्य के आचार–व्यवहार के लिए कुछ दिशा–निर्देश निर्धारित करता है। इन दिशा–निर्देशों के अनुसार ही धर्मावलम्बी अपने कार्यकलापों को निर्देशित या निरूपित करते हैं। ये दिशा–निर्देश प्रत्येक धार्मिक पद्धति के धार्मिक नैतिक मूल्यों में समाहित होते हैं।[...]

नैतिकता केवल धर्म तक ही सीमित नही होती। यहाँ व्यावसायिक नैतिकता, राजनीतिक नैतिकता तथा इसी प्रकार की अन्य नैतिकताओं का उल्लेख किया जा सकता है। नैतिकता का सामाजिक संरचना के साथ संबंध होता है, क्योंकि यह समाज में व्यक्तियों के सामाजिक व्यवहार को किसी न किसी प्रकार प्रभावित करती है। उचित–अनुचित का विचार जरूरी है क्योंकि यह सामाजिक आचार–व्यवहार के कुछ ऐसे मानक निर्धारित करता है जो वास्तविक व्यवहार का मूल्यांकन करने या उन्हें जाँचने में प्रयुक्त किए जाते हैं। दूसरे शब्दों में, नैतिक नियम ''क्या करना चाहिए'' के द्योतक होते हैं। वे उन सामाजिक समूहों के विशेष मूल्यों तथा मान्यताओं को प्रकट करते हैं जिनसे वे निरूपित होते हैं।

उनके अनुसार प्रोटेस्टेंट धर्म तथा पूँजीवाद के नाम से विख्यात आर्थिक व्यवस्था के बीच कुछ अनुरूपताएँ या समानताएँ विद्यमान थीं। वेबर का मानना था कि इन्हीं समानताओं ने पश्चिमी जगत में पूँजीवाद के विकास में सहायता दी।''
(ई एस ओ 13, खण्ड 4:24 से अनुकूलित)

जबकि मार्क्स ने पूँजीवाद और पूँजीवादी विकास का एक क्रमबद्ध प्रतिमान प्रस्तुत किया, वेबर ने उन पहलुओं व संकल्पनाओं की ओर ध्यान आकृष्ट कर एक व्यापकतर एवं स्पष्टतर विश्लेषण प्रस्तुत किया जिन पर मार्क्स ने जोर नहीं दिया था। वेबर ने मूल्यों, विचारों एवं धार्मिक आस्थाओं जैसे सांस्कृतिक कारकों की भूमिका के साथ–साथ आर्थिक एवं राजनीतिक कारकों की ओर भी ध्यान देकर पूँजीवाद के ऐतिहासिक प्रकटन की जाँच–पड़ताल की। मार्क्स से भिन्न, जिसने आर्थिक कारकों को प्रमुखता दी, वेबर ने उन सांस्कृतिक कारकों पर जोर दिया जिन्होंने किसी खास क्रियाकलाप (आर्थिक गतिविधि के उदाहरण में) के विषय में मनुष्य द्वारा सोचे जाने वाले तरीके को गढ़ा और इस प्रकार उनके क्रिया–व्यापार को प्रभावित किया। पूँजीवाद के विकास विषयक वेबर के शोध–प्रबंध में, मार्क्स से भिन्न, केवल भौतिक आयामों एवं प्रौद्योगिकीय कारकों पर ही ध्यान केंद्रित नहीं किया गया' बल्कि उन विचारों के क्षेत्र पर भी ध्यान दिया गया जो मनुष्य रखता था। पश्चिमी जगत में पूँजीवाद की संवृद्धि की ओर प्रवृत कारकों का ध्यानपूर्वक अध्ययन करने के बाद, वेबर ने यह प्राक्कथन प्रतिपादित किया कि यह

'प्रोटेस्टेंट नीति–शास्त्र' ही था जिसने सोचने और काम करने के परम्परागत तरीकों की जकड़ से निज़ात दिलाई और काम करने व धन–सम्पत्ति संचित करने का एक नया तरीका चलाया।

आइए, जानें कि प्रोटेस्टेंट नीति–शास्त्र से क्या तात्पर्य है। प्रोटेस्टेंट नीति–शास्त्र की जड़ में यह मान्यता है कि मानव–जीवन का परम लक्ष्य मोक्ष है। मोक्षप्राप्ति के लिए कठोर आत्म–संयम का पालन आवश्यक है, और एक मितव्ययी जीवन जीना भी। यूरोप में अनेक प्रोटेस्टेंट पंथों का उदय देखा गया। इनमें ही एक था– कैल्विनिज्म अर्थात् जॉन कैल्विन के उपदेश। इस पंथ ने इस बात पर जोर दिया कि लोगों को परिश्रम करना चाहिए और लाभ कमाना चाहिए। इसने, बहरहाल, उन्हें अपने अर्जित लाभ को सांसारिक सुखों और विलास–वस्तुओं पर खर्च करने से मना किया। उनके समक्ष एकमात्र विकल्प था– अर्जित धन का पुनःनिवेश करें व और अधिक धन कमाएँ। इस प्रकार, युक्तियुक्त पूँजीवाद को प्रोत्साहन मिला।

बोध प्रश्न 2

1. वेबर द्वारा कितने प्रकार की सामाजिक क्रियाओं की पहचान की गई? इनमें से कौन–सी आधुनिक पाश्चात्य समाज की एक विशेषता है ?
2. वेबर द्वारा प्रस्तुत पूँजीवाद का विकास, इस संदर्भ में कार्ल मार्क्स के दृष्टिकोण से कैसे भिन्न है?

7.6 सारांश

इस इकाई ने हमें मैक्स वेबर के कुछ प्रमुख विचारों से अवगत कराया। वेबर को ऐमिल दर्खाइम और कार्ल मार्क्स की ही भाँति समाजशास्त्र के प्रवर्तकों में से एक माना जाता है। हमने उन जीवनचरित संबंधी एवं सामाजिक कारणों पर चर्चा की जिन्होंने उनके कार्य और विचारों को आकार प्रदान किया, और एक लोक–बुद्धिजीवी स्वरूप तत्कालीन राजनीति में उनकी भागीदारी पर प्रकाश डाला। हमने दर्शाया कि किस प्रकार उन्होंने मानवीय प्रेरणाओं की सुस्पष्ट समझ का आयाम प्रस्तुत किया और आर्थिक एवं राजनीतिक प्रक्रियाओं एवं पद्धतियों को आकार देने में संस्कृति एवं मूल्यों की भूमिका पर प्रकाश डाला। इससे पूँजीवादी समाज और सामाजिक परिवर्तन का एक कहीं अधिक परिपूर्ण और समग्र विश्लेषण सामने आया। हमने वेबर के प्रविधि दृष्टिकोण पर चर्चा की जो कि कठोर एवं सचेत था, साथ ही तथ्यों एवं उनके अंतर्सबंधों के गहन विश्लेषण की सावधानीपूर्वक जाँच–पड़ताल द्वारा ऐतिहासिक एवं समाजशास्त्रीय कारणात्मकता एवं संभाव्यता को सिद्ध करने का प्रयास करता था। हमने सामाजिक–विज्ञान शोध में मूल्य–तटस्थता पर उसके द्वारा जोर दिए जाने पर प्रकाश डालते हुए इकाई का समापन किया।

7.7 संदर्भ

बोगार्डस इमोरी एस. (1960), *द डिवेल्पमेंट ऑफ सोशल थॉट,* न्यूयार्कः लॉन्गमैन ग्रीन एंड कंपनी।

कोसर, लेविन (1977), *मास्टर्स ऑफ सोसिऑलॉजिकल थॉट : आइडियाज़ इन हिस्टॉरिकल एंड सोशल कॉन्टेक्ट,* न्यूयार्कः हार्कोर्ट कॉलेज पब्लिशर्ज।

फ्रिअंड, जूलियन (1972), *द सोसिओलॉजी ऑफ मैक्स वेबर,* मिडिलसैक्सः पेन्विन बुक्स।

हेरन, फ्रैंक (1985), *रीज़न एंड फ्रीडम इन सोशियॅलोजिकल थॉट,* बोस्टनः एलन एंड अन्विन।

इंदिरा गाँधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय पाठ्यसामग्री (2003), *समाजशास्त्रीय सिद्धांत* (ईएसओ–13), नई दिल्ली : इग्नू

पॉजी, निआनफ्रैंको (2006), वेबरः *ए शॉर्ट इण्ट्रोडक्शन,* कैम्ब्रिजः पॉलिटी प्रैस।

वेबर मैक्स (1946), *फ्रॉम मैक्स वेबरः ऐसेज इन सोसिऑलोजी* (अनुवाद एवं सम्पादन–हैन्स एच. गर्थ एवं सी. राइट मिल्ज) न्यूयार्कः ऑक्सफोर्ड यूनिवसिटी प्रैस।

7.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

1. क) असत्य

   ख) सत्य

2. 'मूल्य प्रासंगिकता' का अर्थ है– किसी शोधकर्ता की अपनी अभिरुचियाँ अथवा उन्मुखता जो किसी विशिष्ट शोध समस्या के चयन को प्रभावित करती हो। तथापि, समस्या का अध्ययन करते समय, शोधकर्ता को 'मूल्य तटस्थता' बनाए रखनी होती है और अपनी विचारधारा अथवा मूल्य पद्धति के अनुरूप अध्ययन–विषय के निष्कर्षों को छलयोजित नहीं करना होता। मूल्य तटस्थता 'तथ्यों' एवं 'मूल्यों' के बीच के अंतर पर प्रकाश डालती है।

बोध प्रश्न 2

1. वेबर ने चार प्रमुख प्रकार की सामाजिक क्रियाओं की पहचान की। ये हैं– पारम्परिक क्रिया–व्यापार, संवेगात्मक/भावात्मक क्रिया, मूल्योन्मुखी युक्तियुक्त क्रिया तथा लक्ष्योन्मुखी क्रिया–लक्ष्य–उन्मुख विवेकपूर्ण क्रिया, जिसमें लक्ष्यों एवं साधनों को विवेकपूर्ण रूप से चुना जाता है (जैसे–किसी इंजीनियर द्वारा भवन बनाने के लिए सार्वाधिक दक्षपूर्ण उपलब्ध साधनों का प्रयोग करना, को आधुनिक पाश्चात्य समाज को परिभाषित करने वाली विशेषता के रूप में देखा जाता है।

2. कार्ल मार्क्स ने पूँजीवाद के विकास में आर्थिक कारकों की भूमिका पर जोर दिया। पूँजीवाद के विकास विषयक वेबर के विचार, मार्क्स से भिन्न, महज भौतिक आयामों एवं प्रौद्योगिकीय कारकों पर ही ध्यान केंद्रित नहीं करते, बल्कि उन विचारों के प्रति भी ध्यान आकृष्ट करते हैं जिन्हें लोग मानते थे और जो लोगों को किसी खास क्रिया को करने हेतु प्रोत्साहित भी करते थे। वेबर ने मूल्यों, विचारों एवं धार्मिक आस्थाओं जैसे सांस्कृतिक कारकों की भूमिका के साथ–साथ आर्थिक एवं राजनीतिक कारकों की ओर भी पूरा ध्यान देते हुए पूँजीवाद के विकास का अध्ययन किया।

इकाई 8 सामाजिक क्रिया और आदर्श प्ररूप*

इकाई की रूपरेखा

8.0 उद्देश्य

8.1 प्रस्तावना

8.2 सामाजिक क्रिया

8.2.1 मान्यताओं और मूल्यों की भूमिका

8.2.2 सामाजिक क्रिया के प्रकार

8.3 आदर्श प्ररूप : व्याख्या, संरचना और विशेषताएं

8.3.1 व्याख्या

8.3.2 संरचना

8.3.3 विशेषताएं

8.4 आदर्श प्ररूप के उद्देश्य और उपयोग

8.5 वेबर द्वारा निर्धारित आदर्श प्ररूप

8.5.1 विशिष्ट ऐतिहासिक तत्वों के आदर्श प्ररूप

8.5.2 सामाजिक यथार्थ के अमूर्त तत्व

8.5.3 व्यवहार विशेष की पुनर्रचना

8.6 सारांश

8.7 संदर्भ

8.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

8.0 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने बाद आपके लिए संभव होगा

- वेबर के सामाजिक क्रिया की संकल्पना का विवेचन करना
- आदर्श प्ररूपों के अर्थ और विशेषताओं की चर्चा करना
- सामाजिक विज्ञानों के आदर्श प्ररूपों के उददे्श्य और उपयोग की विवेचना करना
- मैक्स वेबर ने अपनी रचनाओं में आदर्श प्ररूप का उपयोग कैसे किया है, इसकी व्याख्या करना।

8.1 प्रस्तावना

इस इकाई में सामाजिक क्रिया और आदर्श प्रारूप का अर्थ स्पष्ट किया गया है। मैक्स वेबर के सिद्धान्त के अनुसार सामाजिक क्रिया और आदर्श प्ररूप की समाजशास्त्रीय अवधारणा और विशेषताओं की व्याख्या की गई है। पहले सामाजिक क्रिया पर मान्यताओं और मूल्यों की भूमिका पर विचार किया गया है। उसके बाद वेबर द्वारा रेखांकित सामाजिक क्रिया के प्रकार पर प्रकाश डाला गया है। उसके बाद वेबर के आदर्श प्रारूप की संकल्पना और विशेषताओं का वर्णन किया गया है। यहां इन दो प्रश्नों का उत्तर भी

*इग्नू पाठ्यसामग्री से अंगीकृत : *समाजशास्त्रीय सिद्धान्त* (ESO13) की इकाई 14 एवं 16 का नीता माथुर द्वारा संशोधन।

दिया गया है कि समाजशास्त्रियों को आदर्श प्ररूप विकसित करने की जरूरत क्यों पड़ती है और ऐसे प्ररूप कैसे तैयार किये जाते हैं। वेबर ने तीन विशिष्ट रूप तरीको से आदर्श प्ररूपों का उपयोग किया। तीनों सन्दर्भों में आदर्श प्ररूपों के उपयोग की चर्चा की गई है। ये सन्दर्भ है

(क) विशिष्ट ऐतिहासिक तत्वों के आदर्श प्ररूप

(ख) सामाजिक यथार्थ के अमूर्त तत्वों के आदर्श प्ररूप और

(ग) किसी विशिष्ट व्यवहार की पुनर्रचना के आदर्श प्ररूप।

उचित उदाहरणों के साथ इन तीन तरह के प्ररूप की विवेचना की जा रही है।

8.2 सामाजिक क्रिया

मिचेल (1968:2) के अनुसार, 'सामाजिक कार्य सामाजिक व्यवहार को दर्शाता है। इस अवधारणा का उपयोग समाज–मनोविज्ञानी और समाजशास्त्री दोनों करते हैं। अनेक समाजशास्त्रियों ने सामाजिक कार्य को सामाजिक विज्ञानों में प्रेक्षण की उचित इकाई माना। कोई कार्य सामाजिक तब कहा जाता है, जब इसे करने वाला ऐसे व्यवहार करे कि उसका कार्य एक या अधिक व्यक्तियों को प्रभारित करने के लिए हो। समाजशास्त्र में सर्वप्रथम मैक्स वेबर ने व्यापक रूप से सामाजिक कार्य की अवधारणा का उपयोग किया और इस बात पर जोर दिया कि सामाजिक कार्य समाजशास्त्रीय सिद्धांत का आधार हैं।' (मिचेल 1968:2)

8.2.1 मान्यताओं और मूल्यों की भूमिका

मैक्स वेबर (1964:128–129) के अनुसार 'समाजशास्त्र ऐसा विज्ञान है जिसमें सामाजिक कार्य को भली–भांति समझने का प्रयास इसलिए किया जाता है ताकि सामाजिक कार्य के कारण और प्रभावों की कार्य–कारण संबंधों के आधार पर व्याख्या की जा सके।' यहाँ सामाजिक कार्य की निम्नलिखित प्रमुख विशेषताऐं दी जा रही है।

i) इसमें सभी प्रकार का मानवीय व्यवहार शामिल है।

ii) इसे मानवीय व्यवहार को व्यक्तिपरक अर्थ मिलता है।

iii) इसमें कार्य कर रहे व्यक्ति अथवा समूह परस्पर व्यवहार को ध्यान में रखते हैं।

iv) इसकी दिशा निश्चित होती है।

वेबर की सामाजिक क्रिया के सिद्धांत बॉक्स 8.1 में देखें।

बॉक्स 8.1 वेबर की सामाजिक क्रिया का सिद्धांत

जैसा कि हमने इस अध्याय के पहले खंड में उल्लेख किया है, वेबर सामाजिक सिद्धांत को इस तरह से विकसित करना चाहते थे जो सामाजिक कर्त्ता के दृष्टिकोण से सामाजिक क्रिया परीक्षण में विश्वसनीय हो। हालांकि वेबर मार्क्स के साथ साझा करने की इच्छा स्थापित करते हैं जिसे हम सामाजिक क्रिया का एक सिद्धांत कह सकते हैं, अर्थात्, सामाजिक कर्त्ता कैसे और क्यों काम करते हैं, इसका सुसंगत विवरण है, वेबर की व्याख्या के पहलू मार्क्स द्वारा प्रस्तुत

व्याख्या अलग हैं। जहाँ मार्क्स ने प्रेरणा को उत्पादित गतिविधि के माध्यम से मानव की अभिव्यक्ति और जीवित रहने और समृद्ध होने की इच्छा को प्रेरणा के रूप में वर्णित किया है, वेबर का तर्क है कि सामाजिक क्रिया ने सामाजिक कर्त्ता को भी अपने मूल्यों और विश्वासों को जीने के अवसर प्रदान किया। सवाल यह नहीं है कि सामाजिक कर्त्ता जीवित रहने के के लिए कार्य करते हैं, लेकिन कई लोगों के लिए जीवन की गुणवत्ता मानव चेतना के कुछ अंतर्भूत और भावात्मक पहलुओं पर भी निर्भर करती है जिन्हें अक्सर मूल्यों और विश्वासों के रूप में व्यक्त किया जाता है। उदाहरण के तौर पर, यदि सामाजिक कर्ताओं का एक समूह आध्यात्मिक विश्वासों के एक विशेष समूह को साझा करता है, इस तथ्य के बावजूद कि उन्हें अभी भी जीवित रहने की आवश्यकता है, तो ऐसी मान्यताओं को उनके अस्तित्व के बारे में विचारों को शामिल करने के लिए 'अस्तित्व' की आवधारणा को संषोधित किया जा सकता है। एक सामाजिक सिद्धांत जो उस संदर्भ में सामाजिक क्रिया की व्याख्या करता है, उसमें कुछ जरूरतों और इच्छाओं का शामिल करता है, जो बुनियादी तौर पर आर्थिक लोगों के साथ मौजूद हैं।

तर्क की इस पंक्ति को मानते हुए आधुनिक दुनिया में साधक तर्कसंगतता के अथक प्रसार के अपने विश्लेषण के संदर्भ में, वेबर के सामाजिक क्रिया के सिद्धांत, जो अन्यथा विभिन्न प्रकार की क्रिया की तर्कसंगतता के विश्लेषण के आसपास मौजूद हैं। यदि व्यक्ति वास्तव में एक तर्कसंगत और तर्क संगत सामाजिक दुनिया में मग्न हैं, तो निश्चित रूप से यह उनके कार्य करने के तरीके पर एक महत्वपूर्ण प्रभाव डालता है। वेबर के सामाजिक क्रिया के सिद्धांत के विचलन का मूल बिंदु यह है कि क्रियाओं को एक दूसरे से अलग किया जा सकता है, जिसके आधार पर कर्त्ता किस तरह की तर्कसंगतता व्यक्त करने की कोशिश कर रहा है। अप्रत्याशित रूप से वह निष्कर्ष निकालते हैं कि आधुनिक समाज में विभिन्न प्रकार की तर्कसंगतता जो अक्सर सामाजिक क्रिया का मार्गदर्शन करती है, साधक तर्कसंगतता है। आधुनिक या आधुनिक तरीके से कार्य करने का मतलब है, साधक तर्कसंगतता के आधुनिक सिद्धांतों के अनुसार कार्य करना।'' (रेनसम 2011:119)

8.2.2 सामाजिक क्रिया के प्रकार

वेबर ने सामाजिक क्रिया के निम्नलिखित चार प्रमुख प्रकार बताए हैं। ये वर्गीकरण इन क्रियाओं के उन्मुखीकरण (orientation) के तरीकों द्वारा किया गया है।

i) **किसी लक्ष्य के संदर्भ में तार्किक कार्य अथवा स्वैकरैशनल (Zweckrational) क्रियाः** लक्ष्यों के संदर्भ में तार्किक क्रिया का वर्गीकरण उन दशाओं अथवा साधनों के द्वारा किया जाता है जिनका प्रयोग व्यक्ति अपने तार्किक रूप से चुने हुए लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए करता है। इसका एक उदाहरण है पुल का निमार्ण कर रहा एक इंजीनियर। उसकी गतिविधियां अपने लक्ष्य यानि निर्माण को पूरा करने की दिशा में संचालित होती है।

ii) **किसी मूल्य के संदर्भ में तार्किक कार्य अथवा वैर्टरैषनल (wetrational) क्रियाः** मूल्यों के संदर्भ में क्रिया का वर्गीकरण किसी निरपेक्ष मूल्य के प्रति तार्किक दृष्टि के आधार पर किया जाता है। इस क्रिया में अपने देश के लिए अपने प्राण

न्यौछावर करने वाले सैनिक का उदाहरण दिया जा सकता है। उसकी क्रिया धन–दौलत की प्राप्ति जैसे किसी भौतिक लक्ष्य की पूर्ति के लिए नहीं बल्कि गौरव और देश–भक्ति जैसे विशिष्ट मूल्यों के लिए है।

iii) **परम्परागत क्रियाः** परम्परागत कार्य के प्ररूप का वर्गीकरण लम्बे समय से चले व्यवहार, रीति–रिवाज और आदतों के अनुरूप किए गए कार्य से होता है। यह कार्य उन परम्पराओं और विश्वासों से प्रेरित होता है, जो हमारे स्वभाव का अंग बन गए हैं। बड़ों को प्रणाम अथवा नमस्कार करना एक तरह से स्वभाव का अंग है और सहज ही ऐसा हो जाता है।

iv) **भावात्मक क्रियाः** भावात्मक कार्य का वर्गीकरण भावात्मक प्रभाव से निश्चित होने वाली दिशा के अनुसार किया जाता है इसके निर्धारण में कार्य करने है इसके निर्धारण में कार्य करने वाले पर पड़े विशिष्ट प्रभाव और भावात्मक स्थिति को ध्यान में रखा जाता है। इस प्रकार की क्रिया व्यक्ति की भावात्मक स्थिति के फलस्वरूप होती है।

वास्तविकता में इन चारों प्रकार की सामाजिक कार्य का मिला जुला रूप ही पाया जाता है, लेकिन विश्लेषण और समझने के लिए इन्हें शुद्ध या आदर्श प्ररूपों में विभाजित कर लिया जाता है। उदाहरण के लिए, तार्किक कार्य के आदर्श प्ररूप से असंगत विचलन को आंका जा सकता है तथा यह समझा जा सकता है कि वह कार्य चारों प्रकारों में से किससे अधिक मेल खाता है। आइए, अब सोचिये और करिए 2 को पूरा करें।

सोचिए और करिए 1

रोज़मर्रा की जिंदगी से मैक्स वेबर द्वारा निर्धारित कार्य के इन चार प्रकारों में से प्रत्येक के दो–दो उदाहरण दीजिए। यदि संभव हो तो इनकी तुलना अपने अध्ययन केंद्रों में अन्य विद्यार्थियों द्वारा दिए गए उदाहरणों से कीजिए।

8.3 आदर्श प्ररूपः व्याख्या, संरचना और विशेषताएं

मैक्स वेबर के अनुसार 'आदर्श प्ररूप' शब्द का अपना विशिष्ट अर्थ है और इसकी संरचना में कुछ बुनियादी सिद्धांत हैं। इस भाग में 'आदर्श प्ररूप' शब्द सामान्य तथा वेबर द्वारा बताया गया अर्थ, इसकी संरचना और विशेषताओं के बारे में बताया गया है।

8.3.1 व्याख्या

सबसे पहले आइए हम 'आदर्श' और 'प्ररूप' शब्दों के शब्दकोशीय अर्थ की चर्चा करें। न्यू वेबस्टर डिक्शनरी के अनुसार 'आईडियल' (जिसका हिन्दी पर्याय 'आदर्श' है) का अर्थ ''अधिक से अधिक पूर्णता की स्थिति वाला मानक स्वरूप या धारण है।'' इसकी चर्चा किसी मानसिक छवि या धारणा के रूप में होती है, किसी भौतिक पदार्थ के रूप में नहीं। कॉलिंस कॉबिल्ड इंगलिश लैंगएज डिक्शनरी के अनुसार, ''किसी सन्दर्भ में आपका आदर्श व व्यक्ति या वस्तु होगी जो आपको उस सन्दर्भ में सर्वोत्तम उदाहरण लगे। ''

टाइप (जिसका हिन्दी पर्याय 'प्ररूप' है) का अर्थ है ''कोई प्रकार, वर्ग अथवा समूह जिसे अपनी खास विशेषता के कारण अन्य वर्गों से अलग रखा जा सके'' (*न्यू वेबस्टर डिक्शनरी, 1985*)। इस तरह, आमतौर से आदर्श प्ररूप किन्हीं वस्तुओं या व्यक्तियों के

ऐसे प्रकार, वर्ग अथवा समूह को कहा जा सकता है जिसकी अपनी खास विशेषता अथवा लक्षण हो और विशेषता अपने वर्ग या समूह में सर्वोत्तम लगे।

वेबर के 'आदर्श प्ररूप' का इस्तेमाल एक विशिष्ट अर्थ में किया। उसके अनुसार 'आदर्श प्ररूप' एक मॉडल की तरह, दिमागी तौर पर बनाई गई ऐसी विधि है जिसके आधार पर वास्तविक स्थिति अथवा घटना को परखा जा सकता है और उसका क्रमबद्ध तरीके से चित्रण किया जा सकता है। वेबर ने सामाजिक यथार्थ को समझने और परखने के लिए आदर्श प्ररूप को विचार पद्धति के साधन के रूप में प्रयुक्त किया है।

विचार पद्धति अवधाराणाओं और तर्कों पर आधारित शोध विधि का ऐसा तरीका है जिससे ज्ञान विकसित होता है। ऐतिहासिक दृष्टि से देखा जाये तो सामाजिक विज्ञानों के विचार पद्धति में ज्यादातर जोर इनकी वैज्ञानिक प्रमाणिकता निर्धारित करने पर दिया गया है। (मिचेल 1968: 118)। मैक्स वेबर की सामाजिक विज्ञानों में वस्तुपरकता के प्रति विशेष रूचि थी। इसलिए उसने आदर्श प्ररूप को विचार पद्धति के ऐसे साधन के तौर पर प्रयोग किया जो यथार्थ को वस्तुपरक दृष्टि से देखें। यह सामाजिक यथार्थ को किसी व्यक्तिपरक पूर्वाग्रह के बिना परखता है तथा वर्गीकृत, क्रमबद्ध और परिभाषित करता है। आदर्श प्ररूप का मूल्यों से कुछ संबंध नहीं है। शोध के साधन के रूप में आदर्श प्ररूप का प्रयोग वर्गीकरण और तुलना के लिए होता है। मैक्स वेबर (1971:63) के अनुसार, आदर्श प्ररूप की अवधारणा शोध कार्य में संभावित कारणों की खोज में हमारी मदद करती है। यह यथार्थ का विवरण नहीं है लेकिन इसका उद्देश्य ऐसे विवरण के स्पष्ट अभिव्यक्ति किया गया है। इस दृष्टि से, आदर्श प्ररूप ऐसी अवधारणाएं है अथवा संरचनाएं है, जिनका किसी सामाजिक समस्या को समझने और विश्लेषित करने की विचार पद्धति में साधन के रूप में प्रयोग किया जाता है।

यह समझने के लिए मैक्स वेबर आदर्श प्ररूपों का कैसे उपयोग किया, आइये देखें कि इन प्ररूपों की रचना कैसे होती है।

8.3.2 संरचना

आदर्श प्ररूप अनिश्चित संख्या में ऐसे तत्वों के अमूर्तीकरण और संयोग से विकसित किए जाते हैं, जो तत्व यथार्थ में पाये तो जाते है लेकिन अपने विशिष्ट रूप में या तो कभी नहीं पाये जाते या बहुत ही कम पाए जाते है इसलिए, वेबर ने यह नहीं माना कि उसने कोई नई अवधारणा पर आधारित पद्धति प्रस्तुत की। वेबर ने इस बात पर जोर दिया कि व्यवहार में जो पहले से किया जा रहा है, वह उसी को अधिक स्पष्ट कर रहा है। आदर्श प्ररूप तैयार करने लिए समाजशास्त्री पूरे ढांचे से कुछ विशेषताओं को चुनता है, क्योंकि सम्पूर्ण ढांचा अस्पष्ट और भ्रमित करने वाला होता है। उदाहरण के लिए, यदि हम भारत में लोकतंत्र (अथवा धर्मनिरपेक्षता, साम्प्रदायिकता, समानता) का अध्ययन करना चाहें तो सबसे पहले हमें लोकतंत्र की अवधारणा को इसकी अनिवार्य तथा प्रारूपिक विशेषताओं के आधार पर परिभाषित करना होगा। यहां लोकतंत्र की कुछ अनिवार्य विशेषताओं का उल्लेख करना उचित होगा, जैसे कि बहुदलीय प्रणाली, सार्वभौमिक वयस्क मताधिकार, जन समुदाय के प्रतिनिधियों द्वारा सरकार का गठन, निर्णयों में जन समुदाय की भागीदारी, समानता का अधिकार, बहुमत का सम्मान। लोकतंत्र का शुद्ध या आदर्श प्ररूप तैयार होने के बाद यह प्ररूप हमारे विश्लेषण की दिशा निर्धारित करेगा और विश्लेषण का साधन बनेगा। भारत के लोकतंत्र की विशेषताओं का इस प्ररूप के अनुरूप अथवा प्रतिकूल होना ही यथार्थ का सही चित्र हमारे सामने

रखेगा। इस प्रकार, आदर्श प्ररूप से सामान्य अथवा औसत विशेषताएं नहीं, बल्कि प्रारूपिक और अनिवार्य विशेषताएं प्रकट होती है। उदाहरण के लिए, अपनी पुस्तक *द प्रोटेस्टेंट एथिक एंड स्पिरिट ऑफ कैपिटलिज्म* में वेबर ने कल्विन धर्म की विशेषताओं का विश्लेषण किया है। ये विशेषताएं विभिन्न ऐतिहासिक लेखों से ली गई है। इनमें कल्विन सिद्धांतों के ऐसे हिस्से शामिल हैं जो वेबर के अनुसार पूंजीवादी प्रवृत्ति विकसित करने की दृष्टि से विशेष महत्व के रहे हैं। इस तरह, आदर्श प्ररूप कुछ ऐसे तत्वों, गुणों अथवा विशेषताओं का चयन है जो संबंधित अध्ययन के लिए विशेष रूप से प्रांसगिक होते है। लेकिन एक बात ध्यान में रखनी चाहिए कि आदर्श प्ररूप यथार्थ तथ्यों से विकसित तो किए जाते है, परन्तु ये पूर्ण यथार्थ का प्रतिनिधित्व नहीं करते अथवा उनका विवरण प्रस्तुत नहीं करते। तार्किक आधार पर ही ये शुद्ध प्ररूप होते है। वेबर के अनुसार ऐसी आदर्श मानसिक संरचना, अपने अवधारणात्मक शुद्ध स्वरूप में, यथार्थ में व्यावहारिक रूप से कहीं भी नहीं मिल सकती। आदर्श प्ररूप विकसित करने का यही तरीका है। इसे और अच्छी तरह समझने के लिए, इसी इकाई में वेबर द्वारा उपयोग में लाई गई आदर्श प्ररूप की अवधारणाओं की विवेचना की गई है।

8.3.3 विशेषताएं

उपरोक्त चर्चा के आधार पर आदर्श प्ररूपों की निम्न विशेषताएं बताई जा सकती है।

i) आदर्श प्ररूप सामान्य अथवा औसत प्ररूप नहीं है। इसका अर्थ है कि ये विचारधीन समूह, वस्तु अथवा घटना की सभी सामान्य विशेषताओं के रूप में परिभाषित नहीं किए जाते। ये कुछ ऐसे विशिष्ट गुणों पर आधारित है जो आदर्श प्ररूप की अवधारणा विकसित करने के लिए अनिवार्य है।

ii) ये पूर्ण यथार्थ की प्रस्तुति नहीं है, न ही ये सभी बातों की व्याख्या करते है। ये पूर्ण यथार्थ की आंशिक अवधारणा को ही व्यक्त करते हैं।

iii) आदर्श प्ररूप यथार्थ की किसी निश्चित अवधारणा की व्याख्या नहीं करते, ये यथार्थ की कोई परिकल्पना भी नहीं प्रस्तुत करते, लेकिन यथार्थ की व्याख्या और विवरण में सहायक होते है। आदर्श प्ररूपों का क्षेत्र और उपयोग वर्णात्मक अवधाराणाओं से भिन्न होते हैं। धारण के लिए, यदि विभिन्न सम्प्रदाओं के वर्गीकरण में वर्णात्मक अवधारणा का प्रयोग किया जाये और फिर आर्थिक गति–विधि के लिए इनकी अलग–अलग विशेषताओं के महत्व को निर्धारित करना हो तो सम्प्रदायों की धारणा का फिर निर्धारण करना होगा ताकि सम्प्रदायों के ऐसे विशिष्ट गुणों पर ध्यान दिया जा सके जो आर्थिक कार्यकलापो को प्रभावित करते हैं। इस प्रकार, यह धारणा आदर्श विशिष्ट बन जाती है। इसका अर्थ है कि जब किसी वस्तु अथवा घटना के वर्णन के बजाये उसकी व्याख्या या विश्लेषण करना हो तो कुछ तत्वों का अमूर्तिकरण और पुनर्निर्धारण करके किसी भी वर्णात्मक धारणा को आदर्श विशिष्ट धारणा में बदला जा सकता है।

iv) इस दृष्टि से यह भी कहा जा सकता है कि आदर्श प्ररूप घटनाक्रम के कार्यकारण विश्लेषण से जुड़े है, कि लेकिन यह पूर्व–निर्धारित व्याख्या के अर्थ में नहीं जुड़े हैं

v) सामान्य निष्कर्षों तक पहुंचने और तुलनात्मक विश्लेषण में भी यह सहायक है।

vi) आदर्श प्ररूप आनुभाविक शोध के निर्देशन में भी सहायक होते है। यह ऐतिहासिक और समाजिक यथार्थ के आकड़ों को क्रमबद्ध करने में भी उपयोगी होते हैं।

बोध प्रश्न 1

i) निम्नलिखित तत्वों में सही कथन पर निशान लगाइये।

आदर्श प्ररूप क्या है?

(क) आदर्श प्ररूप सामान्य प्ररूप है।

(ख) आदर्श प्ररूप औसत प्ररूप है।

(ग) आदर्श प्ररूप शुद्ध प्ररूप है।

(घ) आदर्श प्ररूप आदर्शात्मक प्ररूप है।

ii) नीचे दिये गये तथ्यों में से प्रत्येक के सामने बने कोषठक में ''सही'' अथवा ''गलत'' पर निशान लगाइये।

(क) आदर्श प्ररूप यथार्थ का विवरण है।
सही/गलत

(ख) आदर्श प्ररूप किसी समाजिक स्थिति अथवा घटना के विश्लेषण और व्याख्या में सहायक हैं।
सही/गलत

(ग) आदर्श प्ररूप विशिष्ट और अनिवार्य गुणों के चयन द्वारा विकसित किये जाते है।
सही/गलत

(घ) आदर्श प्ररूप परिकल्पना है।
सही/गलत

(च) आदर्श प्ररूप पूर्ण यथार्थ प्रतिनिधित्व करते है।
सही/गलत

(छ) आदर्श प्ररूप कार्य–कारण संबंधों के और तुलनात्मक विश्लेषण में सहायक है।
सही/गलत

8.4 आदर्श प्ररूप के उद्देश्य और उपयोग

आदर्श प्ररूप व्यावहारिक समस्याओं के विश्लेषण के लिए तैयार किये जाते हैं। बहुत से शोधकर्ताओं को इनका पूरा ज्ञान नहीं होता, जिनका उन्हें अपने अध्ययन में उपयोग करना है। इससे उनका शोध कार्य अस्पष्ट और अनिश्चित हो जाता है। वेबर का कहना है कि इतिहासवेत्ताओं के विवरण में जिस भाषा का प्रयोग होता, उसमें सैकड़ों अस्पष्ट शब्द होते हैं। यह शब्द सही भाषा की तलाश की अचेतन आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए इस्तेमाल किये जाते हैं। सही अभिव्यक्ति क्या होगी, यह महसूस तो किया जाता है, लेकिन उस पर स्पष्ट रूप से विचार नहीं हो पाता (वेबर 1949: 92–93),

समाज वैज्ञानिकों का दायित्व है कि वे विषय–वस्तु से अस्पष्टता दूर करके इसे बोधगम्य बनाये। उदाहरण के लिए, आइये हम सत्ता के आदर्श प्ररूपों की संरचना पर चर्चा करें। वेबर ने सत्ता के तीन प्रमुख प्रकार **तर्क–विधिक सत्ता**, परम्पारिक और **करिश्माई**

अथवा चमत्कारिक सत्ता बताये हैं। इनमें से प्रत्येक तरह की सत्ता का पालन करने की प्रेरणा अथवा नेता की वैधता के दावे के आधार पर परिभाषित किया जाता है। यथार्थ में इन तीन प्ररूपों का मिश्रण या मिला–जुला रूप पाया जाता है। इस लिए सत्ता के प्ररूपों के बारे में हमारी समज एकदम स्पष्ट होनी चाहिये। यथार्थ ने यह सभी प्ररूप मिले–जुले रूप में होते हैं, इस लिए इन प्ररूपों को स्पष्ट रूप से परिभाषित किया जाना आवश्यक है।

आदर्श प्ररूप पूरी तरह अवधारणात्मक विचार से नहीं बनते। इन्हें वास्तविक समस्याओं के अनुभाविक अध्ययन से विकसित किया जाता है, संशोधित किया जाता है और अधिक स्पष्ट बनाया जाता है। इससे विश्लेषण की शुद्धता बढ़ जाती है।

इस प्रकार, यह कहा जा सकता है कि आदर्श प्ररूप अनुभाविक समस्याओं के विश्लेषण की शोध पद्धति के साधन है। साथ ही इनसे प्रयोग की गई अवधारणा की स्पष्टता और भ्रम दूर होते है तथा विश्लेषण की शुद्धता बढ़ती है।

सोचिए और करिए 2 को करने से आपको आदर्श प्ररूप की संरचना की क्रिया को समझने में मदद मिलेगी।

सोचिए और करिए 2

आपको गाँवों में ग्राम पंचायत या शहरों में नगर निगम के कामकाज के तरीके की जानकारी होगी। अगर आपका निवास गाँव में है तो ग्राम पंचायत का आदर्श प्ररूप तैयार करिए। अगर शहर में हो तो नगर निगम का आदर्श प्ररूप तैयार करिए। अगर सम्भव हो तो अध्ययन केन्द्र में अपनी टिप्पणी की अन्य विद्यार्थियों के साथ तुलना कीजिए।

वेबर के विचार पद्धति संबंधि लेखो में आदर्श प्ररूप एक प्रमुख धारणा हैं और इसका इस्तेमाल ऐतिहासिक विन्यास अथवा विशिष्ट ऐतिहासिक समस्या को समझने के साधन के तौर पर किया गया है। इसके लिए उसने आदर्श प्ररूप तैयार किए और यह समझा कि घटनाएँ वास्तव में कैसे घटती हैं। साथ ही यह भी दिखाया कि अगर उसके पहले का कोई घटना क्रम नहीं हुआ होता या दूसरे रूप में होता, तो जिस घटना की व्याख्या का प्रयास किया जा रहा है, वह भी दूसरे तरीके से ही घटी होती। उदाहरण के तौर पर हमारे देश के गाँवों में भूमि सुधार लागू होने तथा आधुनिक शक्तियों जैसे शिक्षा, आधुनिक व्यवसाय आदि के प्रवेश ने सयुंक्त परिवार व्यवस्था को क्षति पहुंचाई है। इसका अर्थ है कि किसी घटना (भूमि सुधार, शिक्षा आदि) और तात्कालिक स्थिति (सयुंक्त परिवार) के बीव कार्य–कारण संबंध के आधार पर व्याख्या भी की जा सकती है। इस प्रकार आदर्श प्ररूप की अवधारणा प्रघटना के सामान्य तौर पर व्याख्या करने में मदद करती है

इसका यह अर्थ नहीं है कि हर घटना के पीछे कोई विशिष्ट कारण ही हो। वेबर का यह मानना नहीं है कि समाज का एक तत्व किसी दूसरे तत्व द्वारा निर्धारित होता है। उसने इतिहास और समाजशास्त्र के कार्य–कारण संबंधों को मात्र आंशिक और संभावित ही माना है। इसका अर्थ है कि यथार्थ का एक अंश किसी दूसरे अंश को संभावित या असंभावित, अनुकूल या प्रतिकूल बना सकता है। उदाहरण के लिए कुछ मार्क्सवादियों का कहना होगा कि उत्पादन के साधनों के निजी स्वामित्व का परिणाम यही होगा कि इन साधनों के स्वामी, अल्पसंख्यक वर्ग के पास ही राजनीतिक सत्ता भी आ जायेगी।

लेकिन वेबर की इस बारे में राय होगी कि संपूर्ण नियोजन की आर्थिक व्यवस्था में किसी खास राजनीतिक संगठन की संभावनाएं ज्यादा प्रबल हो जाती है। वेबर के लेखों में कार्य–कारण संबंधों का यह विश्लेषण विश्वभर के घटना क्रम के तुलनात्मक अध्ययन अथवा घटनाओं की जांच परख तथा सामान्य सिद्धान्त निर्धारित करने की उसकी दिलचस्पी से जुड़ा हुआ है। उसने किसी विशेष ऐतिहासिक घटना की अवधारणा प्रस्तुत करने और तुलनात्मक अध्ययन के लिए आदर्श प्ररूपों का प्रयोग किया। वेबर की आदर्श प्ररूप की अवधारणा में इतिहास और समाजशास्त्र की परस्पर निर्भरता सबसे ज्यादा स्पष्ट रूप से दिखाई देती है।

इतिहास की विशिष्ट घटनाओं के विवेचन के अलावा, वेबर ने सामाजिक यथार्थ के अमूर्त तत्वों के विश्लेषण और विशेष तरह के सामाजिक व्यवहार की व्याख्या में आदर्श प्ररूपों का प्रयोग किया। अगले भाग (8.5) में इन पर विस्तृत अध्ययन किया गया है। 8.5 में वेबर की रचनाओं में दिए गए आदर्श प्ररूपों की भूमिका की चर्चा की जाएगी। परंतु अब समय है बोध प्रश्न 2 को हल करने का, क्यों न उसे ही पहले करें।

बोध प्रश्न 2

i) आदर्श प्ररूप कैसे बनाए जाते हैं?

....

....

....

....

....

ii) आदर्श प्ररूप क्यों बनाए जाते हैं?

....

....

....

....

....

8.5 वेबर द्वारा निर्धारित आदर्श प्ररूप

वेबर ने तीन विशिष्ट रूपों में आदर्श प्ररूपों का प्रयोग किया। ये तीन रूप अमूर्तीकरण के तीन स्तरों के आधर पर विभाजित किए गए है। पहले प्रकार के आदर्श प्ररूपों का आधार ऐतिासिक विशिष्टताओं में होता है, जैसे पश्चिमी नगर, प्रोटेस्टेंट नैतिकता आदि। वास्तव में, ये आदर्श प्ररूप विशिष्ट ऐतिहासिक कालों और विशेष संस्कृतिक क्षेत्रों में निर्दिष्ट होते है। दूसरी तरह के आदर्श रूप सामाजिक की अवधारणाएं। सामाजिक यथार्थ के ये तत्व विभिन्न ऐहिासिक और सांस्कृतिक संदर्भों में पाए जाते है। तीसरे प्रकार के आदर्श प्ररूप व्यवहार–विशेष की पुनर्रचना से जुड़े है (कोज़र 1977: 224)। अब हमने इन प्रकारों का अलग–अलग अध्ययन करेंगे।

8.5.1 विशिष्ट ऐतिहासिक तत्वों के आदर्श प्ररूप

वेबर के अनुसार, आधुनिक पाश्चात्य समाज में पूँजीवाद पूरी तरह आ गया है। वेबर ने संपूर्ण ऐतिहासिक तत्वों में से खास विशेषताओं को लेकर पूँजीवाद का आदर्श प्ररूप निर्मित किया ताकि यह एक बोधगम्य स्वरूप ले सके। इस स्वरूप से यह बताया गया कि आधुनिक पूँजीवाद कार्यकलापों के आर्थिक विचार और कल्विन धर्म की प्रवृत्तियों में काफी निकटता है। यह सिद्ध करने के लिए वेबर ने कल्विन धर्म के ऐसे पक्ष प्रस्तुत किए जो उसकी राय में पूँजीवादी प्रवृत्ति के विकास में विशेष महत्व के थे।

वेबर के अनुसार, **पूँजीवाद** का मूल रूप उस उद्यमी प्रवृत्ति में निहित है, जिसका उद्देश्य अधिकाधिक लाभ पाना और अधिकाधिक संग्रह करना है। ये लक्ष्य कार्य और उत्पादन के तार्किक संगठन पर आधारित है। लाभ की इच्छा तथा तार्किक अनुशासन का मेल ही, ऐतिहासिक दृष्टि से पाश्चात्य पूँजीवाद की विशिष्टता का आधार है। लाभ की इच्छा सट्टेबाजी अथवा विजय या फिर साहस से संतुष्ट नहीं होती। यह तो अनुशासन और तार्किकता से ही संतुष्ट होती है। ऐसा आधुनिक राज्य या तर्कसंगत नौकरशाही के कानूनी प्रशासन के द्वारा ही संभव हो सकता है। इस प्रकार, पूँजीवाद को ऐसे उद्यम के रूप में परिभाषित किया जाता है, जो असीमित लाभ प्राप्त करने के लिए नौकरशाही तार्किकता के अनुरूप काम करता है।

वेबर ने यह दिखाने का प्रयास किया कि इस प्रकार की आर्थिक गतिविधि और कल्विन सिद्धांत के तत्वों के बीच काफी समानता है। कल्विन धर्म की नैतिकता के अनुसार ईश्वर सर्वशक्तिमान और सामान्य जन से ऊपर है। मनुष्य को पृथ्वी पर ईश्वर के गौरव के लिए काम करना है और ऐसा तर्कसंगत तरीके से और लगातार तथा नियमित रूप से मेहनत करके ही किया जा सकता है। व्यक्ति चाहे वह अमीर हो या गरीब उसका यह दायित्व है कि वह दैनिक जीवन में नैतिक आचार–विचार अपना कर ईश्वर के प्रति अपना कर्तव्य पूरा करे। ऐसे व्यक्ति के लिए परिश्रम ही पूजा है और आलसीपन की उसकी जिंदगी में कोई गुंजाइश नहीं है। जिसमें वैध आर्थिक गतिविधि से धन कमाना निहित है, कल्विन सिद्धांत का यह विशिष्ट तत्व पूंजीवादी प्रवृति के अनुरूप है। इसका आधार एक व्यवसाय में योग्य तरीके से काम करने के जीवन–मूल्य को कर्तव्य और सदाचार मानना है।

कल्विन धर्म और पूँजीवाद के बीच यह घनिष्ठ संबंध और वेबर द्वारा परिभाषित पूँजीवाद आर्थिक व्यवस्था के उदय की यह स्थिति केवल पश्चिमी देशों में रही है। इसीलिए यह ऐतिहासिक दषृष्टि से एक खस घटनाक्रम है। कल्विन नैतिकता में धार्मिक और आर्थिक गतिविधियों का एक संयोग है, जो न तो कैथोलिक धर्म में है, न ही हिंदू धर्म, इस्लाम, कन्फ्यूशियस धर्म, यहूदी तथा बौद्ध धर्मों में ऐसा संयोग पाया जाता है। वेबर ने इन सभी धर्मो का तुलनात्मक अध्ययन किया।

8.5.2 सामाजिक यथार्थ के अमूर्त तत्व

सामाजिक यथार्थ के ये तत्व अनेक ऐतिहासिक और सांस्कृतिक संदर्भों में पाए जाते है। **नौकरशाही**, सत्ता के प्रकार और क्रिया के प्रकार इन अमूर्त तत्वों के प्रमुख उदाहरण है। आइए, अब हम इन तीनों उदाहरणों पर विचार करें।

(i) नौकरशाही :

वेबर के अनुसार, नौकरशाही संगठनात्मक लक्ष्यों की प्राप्ति के तर्कसंगत अथवा कुशल प्रयासों के लिए सर्वोत्तम प्रशासनिक स्वरूप है।

नौकरशाही की संकल्पना को समझने के लिए बॉक्स 8.2 देखें।

बॉक्स 8.2 नौकरशाही

नौकरशाह शब्द का सामान्य अर्थ ऐसे विभागीय और प्रशासनिक अधिकारियों से है, जो कड़ी कार्यप्रणाली का पालन करते है। मैक्स वेबर ने औद्योगिक समाज में किसी संगठन के लक्ष्यों की विवेकपूर्ण तरीके से प्राप्ति के लिए नौकरशाही को अपरिहार्य माना (मिचेल 1968:21)।

वेबर द्वारा निर्धारित नौकरशाही के आदर्श प्ररूप में अनेक तत्व शामिल है। जैसे

(क) उच्च श्रेणी का विशिष्टीकरण और स्पष्ट रूप से निर्धारित श्रमविभाजन, जिसमें सरकारी कार्य के रूप में काम को बाँट दिया जाता है।

(ख) सत्ता का पद क्रमानुसार ढाँचा, जिसमें निर्देश और दायित्व के क्षेत्रों का स्पष्ट निर्धारण हो,

(ग) नियमों की औपचारिक संस्था, जिसमें संगठन का कामकाज चलाया जाए तथा प्रशासन लिखित प्रलेखों पर आधारित हो,

(घ) संगठन के सदस्यों के परस्पर तथा इसकी सेवाएं लेने वालों के साथ निर्वैयक्तिक संबंध हों,

(च) अधिकारियों की नियुक्ति योग्यता और तकनीकी ज्ञान के आधार पर हो,

(छ) दीर्घ, अवधि की नौकरी हो तथा वरिष्ठता और योग्यता के आधार पर पदोन्नति हो,

(ज) निश्चित वेतन और निजी तथा सरकारी आय के बीच स्पष्ट विभेद हो।

आधुनिक पूँजीवाद के उदय से पहले भी विश्व के अनेक भागों में विकसित नौकरशाही के उदाहरण मिलते है लेकिन पूँजीवाद के अंतर्गत पाई जाने वाली नौकरशाही ही आदर्श प्ररूप से अधिक मेल खाती है। वेबर ने नौकरशाही के इन अमूर्त तत्वों के आधार पर ही एक निश्चित व्यवस्था की व्याख्या की।

(ii) सत्ता के प्रकार

सत्ता के विभिन्न पक्षों को समझने के लिए मैक्स वेबर ने तीन प्रकार की सत्ता के अनुरूप ही इसके आदर्श प्ररूप बनाए। ये है, पारंपरिक, तर्क–विधिक और करिश्माई अथवा चमत्कारिक।

पारंपरिक सत्ता प्राचीन रीति–रिवाजों और नियमों की पवित्रता में विश्वास पर आधारित है। तर्क पर आधारित सत्ता कानूनों, आदेशों और प्रावधानों पर आधारित है। करिश्माई सत्ता का आधार नेता के व्यक्तित्व में निहित है या अनुयायियों द्वारा मान लिए गए असाधारण अथवा चमत्कारी गुण है। ऐसे व्यक्ति में लोगो को विश्वास होता है तथा वह उनकी श्रद्धा का पात्र बन जाता है। अवधारणा के इन आदर्श प्ररूपों का उपयोग वास्तविक राजनीतिक व्यवस्थाओं को समझने में किया जाता है। इनमें से ज्यादातर व्यवस्थाओं में प्रत्येक प्ररूप के अंश होते है।

8.5.3 व्यवहार विशेष की पुनर्रचना

इस प्ररूप में ऐसे तत्व शामिल है जिनके आधार पर किसी व्यवहार–विशेष की तार्किक

पुनर्रचना होती है। उदाहरण के लिए, वेबर के अनुसार आर्थिक सिद्धांत की सभी मान्यताएं किसी विशेष परिस्थिति में लोगों के संभावित व्यवहार के आदर्श प्ररूपों की संरचनाएं ही है, जैसे कि जब लोग पूरी तरह आर्थिक आधार पर ही व्यवहार करें। इसमें आवश्यकत व पूर्ति के कानून, वस्तुओं की उपयोगिता की सीमा आदि शामिल हैं। बाज़ार में वस्तुओं की पूर्ति ही आवश्यकता के अनुसार उनकी कीमत नियंत्रित करती है। इसी तरह उपभोग के लिए वस्तुओं, की उपयोगिता अधिक है या कम, इस पर निर्भर होती है कि बाजार में उपभोग के लिए व कितनी मात्रा में उपलब्ध हैं। आर्थिक सिद्धांत अपने मूल रूप में आर्थिक व्यवहार के अनुरूप चलते हैं। यह मूल रूप निश्चित तरीके से परिभाषित किया जाता है (वेबर 1964: 210)।

समय हो गया है कि अब बोध प्रश्न 3 पूरा किया जाए।

बोध प्रश्न 3

(i) वेबर ने कल्विन धर्म की नैतिकता और पूंजीवादी प्रवृति के बीच संबंध बताने के लिए आदर्श प्ररूप की धारणा का किस तरह उपयोग किया?

....

....

....

....

(ii) मैक्स वेबर द्वारा निर्धारित नौकरशाही के आदर्श प्ररूप की मुख्य विशेषताएं क्या हैं?

....

....

....

....

(iii) मैक्स वेबर ने सामाजिक कार्य के कौन–कौन से चार आदर्श प्ररूप बताए हैं? लगभग आठ पंक्तियों में उत्तर दीजिए।

....

....

....

....

8.6 सारांश

इस इकाई के प्रांरभ में 'आदर्श' और 'प्ररूप' शब्दों का सामान्य अर्थ बताया गया। फिर हमने मैक्स वेबर के सिद्धांतों के अनुसार आदर्श प्ररूप की अवधारणाा और विशेषताओं की चर्चा की। आदर्श प्ररूप ऐसी संरचनाएं अथवा अवधारणाएं है, जो सामाजिक यथार्थ

के स्पष्टीकरण और व्याख्या के लिए बनाई जाती है। वेबर ने आदर्श प्ररूपों का तीन विशिष्ट रूपों में प्रयोग किया। पहले, उसने विशिष्ट ऐतिहासिक तत्वों के आदर्श प्ररूपों का प्रयोग प्रोटेस्टेंट नैतिकता की व्याख्या करने के लिए किया, जो एक विशिष्ट ऐतिहासिक काल और सांस्कृतिक क्षेत्र में विकसित हुआ। दूसरे, उसने सामाजिक यथार्थ के अमूर्त तत्वों जैसे नौकरशाही, सत्ता के प्रकार, सामाजिक कार्य के प्रकार आदि की व्याख्या में आदर्श प्ररूपों का उपयोग किया। तीसरे, वेबर ने व्यवहार–विशेष की पुनर्रचना के लिए भी आदर्श प्ररूप का प्रयोग किया। हमने इस इकाई में वेबर द्वारा निर्धारित आदर्श प्रारूपों का विस्तृत अध्ययन किया।

8.7 संदर्भ

आरों रेंमों, (1967). *मेन करेंट्स इन सोशियोलॉजिकल थॉट्स* वाल्यूम 2, लंदन : पेंगुइन बुक्स

बेन्डिक्स, आर, (1960). *मैक्स वेबर, इन इंटलैक्चुअल पोर्ट्रेट* ऐन्कर न्यार्क टर्नर, स्टीफन (सम्पादन), द केम्ब्रिज कंपेनियन टु वेबर केम्ब्रिज : केम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस

इन्दिरा गाँधी मुक्त विश्वविद्यालय पाठ्यसामग्री (2005) : समाजषास्त्रीय सिद्धान्त (ESO 13); नई दिल्ली : इग्नू

रेनसम.पी. (2011). *सोशल थ्योरी.* नई दिल्ली : रावत पब्लिकेशन्स

8.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

(i) (ग)

(ii) (क) गलत

(ख) सही

(ग) सही

(घ) गलत

(च) गलत

(छ) सही

बोध प्रश्न 2

(i) आदर्श प्ररूप विचाराधीन वस्तु घटना के अनिवार्य तथा विशिष्ट समझे जाने वाले तत्वों अथवा विशेषताओं के चयन से बनाए जाते हैं।

(ii) आदर्श प्ररूप किसी विशिष्ट सामाजिक प्रवृति या समस्या को समझने और विश्लेषित करने के लिए उपयोग में लाए जाते हैं, दूसरे ये प्रयुक्त धारणाओं में अस्पष्टता और भ्रम की स्थिति भी दूर करते है, तीसरे, इनके उपयोग से विश्लेषण ज्यादा स्पष्ट और शुद्ध होता है।

बोध प्रश्न 3

(i) वेबर ने पूंजीवाद का आदर्श प्ररूप निर्मित किया और प्रोटेस्टेंट नैतिकता के ऐसे पक्षों का पता लगाया, उसकी राय में जिनका पूंजीवादी प्रवृत्ति के बनने में महत्वपूर्ण योगदान रहा और जो आधुनिक पाश्चात्य पूंजीवाद के उदय के कारण बने।

(ii) वेबर के अनुसार नौकरशाही के आदर्श प्ररूप की विशेषताएं है– श्रम विभाजन तथा विशेषज्ञता, सरकारी कार्य के रूप में काम का वितरण, अधिकारियों का पदक्रम जिसमें निर्देश और दायित्व के क्षेत्रों का स्पष्ट निर्धारण हो, कामकाज के नियमों की औपचारिक संस्था लिखित प्रलेख, निर्वैयक्तिक संबंध योग्यता के आधार पर नियुक्ति, निजी तथा सरकारी आय में विभेद, पदोन्नति और निश्चित वेतन।

(iii) मैक्स वेबर ने सामाजिक कार्य के निम्नलिखित चार प्रकार बताए है।

(क) **लक्ष्य के संदर्भ में तार्किक कार्यः** उदाहरण के लिए, जिला कलेक्टर द्वारा आगामी चुनावों की व्यवस्था करना

(ख) **मूल्यों के संदर्भ में तार्किक कार्यः** उदाहरण के लिए, सैनिक द्वारा देश के लिए अपना जीवन खतरे में डालना

(ग) **भावात्मक कार्यः** जैसे क्रिकेट मैच में अम्पायर द्वारा बल्लेबाज को आउट न मानने पर गेंदबाज का अम्पायर से अभद्र व्यवहार करना

(घ) **पारंपरिक कार्यः** जैसे शमशान से लौटने के बाद व्यक्ति का स्नान करना

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

इकाई 9 शक्ति एवं सत्ता*

इकाई की रूपरेखा

9.0 उद्देश्य

9.1 प्रस्तावना

9.2 शक्ति और सत्ता की अवधारणाएं

9.2.1 शक्ति

9.2.2 सत्ता

9.2.3 सत्ता के तत्व

9.3 सत्ता के प्रकार

9.3.1 पारंपरिक सत्ता

9.3.2 करिश्माई अथवा चमत्कारिक सत्ता

9.3.3 तर्क–विधिक सत्ता

9.4 नौकरशाही

9.4.1 नौकरशाही के मुख्य लक्षण

9.4.2 नौकरशाही में अधिकारी वर्ग की विषेशताएं

9.5 सारांश

9.6 संदर्भ

9.7 बोध प्रश्नों के उत्तर

9.0 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के बाद आपके लिए संभव होगा

- शक्ति और सत्ता की मैक्स वैबर द्वारा परिभाषित अवधारणाओं को समझना;
- वेबर के सामाजिक कार्य के प्रकारों और सत्ता के प्रकारों के बीच संबंध को स्पश्ट करना;
- सत्ता के तीन प्रकारों पारंपरिक, करिश्माई और तर्क–विधिक की विस्तार से व्याख्या करना; और
- तर्क–विधिक सत्ता का प्रयोग नौकरशाही द्वारा किस तरह किया जाता है, उसकी विवेचना करना।

9.1 प्रस्तावना

इस इकाई में शक्ति और सत्ता को समझने में वेबर के महत्वपूर्ण योगदान पर प्रकाश डाला जाएगा। भाग 9.2 में शक्ति और सत्ता की समाजशास्त्रीय अवधारणाओं का संक्षेप में विवेचन किया गया है जिसमें इन शब्दों के संबंध में वेबर की दृष्टि की विशेष चर्चा की गई है। भाग 9.3 में वेबर द्वारा बताए गए सामाजिक कार्य के प्रकारों की चर्चा की गई है । सत्ता के प्रकारों मुख्यतः पारंपरिक, करिश्माई तथा तर्क विधिक सता का

*इग्नू पाठ्यसामग्री से अंगीकृतः *समाजशास्त्रीय सिद्धान्त* (ESO13) की इकाई 16 का नीता माथुर द्वारा लघु संशोधन।

उल्लेख किया गया है । भाग 9.4 में आपका ध्यान नौकरशाही पर केंद्रित किया गया है जो तर्क विधिक सता को प्रयोग में लाने का एक प्रमुख उदाहरण है ।

9.2 शक्ति और सत्ता की अवधारणाएं

आइए इन मुख्य अवधारणाओं का व्यापक समाजशास्त्रीय दृष्टि तथा वेबर की विशिष्ट दृष्टि से विश्लेषण करें ।

9.2.1 शक्ति

सामान्य प्रयोग में ''शक्ति'' शब्द का अर्थ है ताकत अथवा नियंत्रण की क्षमता। समाजशास्त्रियों ने इसकी परिभाषा एक व्यक्ति अथवा समूह की अपनी इच्छा पूर्ण करने तथा अपने निर्णयों एवं विचारों को कार्यान्वित करने की सामार्थ्य के रूप में की है। इसमें दूसरों की इच्छा के विपरीत भी उन्हें प्रभावित करने अथवा उनके आचरण को नियंत्रित करने की क्षमता निहित है ।

मैक्स वेबर के अनुसार शक्ति सामाजिक संबंधों का एक पहलू है । इसका संबंध एक व्यक्ति द्वारा दूसरे के आचरण पर अपनी इच्छा थोपने की संभावना से है । शक्ति का अस्तित्व सामाजिक अन्तर्क्रियओं में है और यह असमानता की स्थितियां पैदा करती है क्योंकि जिसके हाथ में शक्ति है उसमें इसे दूसरों पर थोपना की प्रवृत्ति होती है। शक्ति का प्रभाव अलग–अलग स्थिति में अलग–अलग होता है। एक ओर यह प्रभाव शक्तिशाली व्यक्ति की क्षमता पर निर्भर करता है । वेबर की मान्यता है कि जीवन के सभी क्षेत्रों में शक्ति का प्रयोग संभव है ।

यह युद्ध क्षेत्र अथवा राजनीति तक ही सीमित नहीं है । इसे बाजार भाषण मंच तथा किसी सामाजिक समारोह, खेल–कूद, वैज्ञानिक गोष्ठियों और यहां तक कि परोपकार की गतिविधियों में भी देखा जा सकता है । उदाहरण के लिए दान अथवा भिक्षा देना अपनी आर्थिक शक्ति प्रदर्शित करने का एक सूक्ष्म तरीका है । एक अमीर व्यक्ति अपनी आर्थिक शक्ति द्वारा भिखारी को कुछ देकर उसे खुश कर सकता है और इंकार करके उसे निराश भी कर सकता है।

शक्ति के स्रोत क्या है ? वेबर ने शक्ति के दो परस्पर विरोधी स्रोतों का उल्लेख किया है। ये नीचे दिए प्रकार से है।

क) वह शक्ति जो धन–अर्थव्यस्था के अंतर्गत औपचारिक मुक्त बाजार में पनपने वाले हितो के मेल से प्राप्त होती है। उदाहरण के लिए चीनी उत्पादकों का एक समूह अधिकाधिक लाभ प्राप्त करने के लिए अपने उत्पादन की सप्लाई को नियंत्रित करे।

ख) सत्ता की एक सीमित प्राणाली जो आदेश देने के अधिकार तथा उसके पालन के कर्त्तव्य का निर्धारण करती है। उदाहरण के लिए सेना में एक जवान अपने अधिकारी का आदेश मानेने को बाध्य है। अधिकारी को आदेश देने की शक्ति सदैव सत्ता की सीमित प्रणाली से मिलती है।

जैसा कि आपने दूसरे विषय में देखा, शक्ति की चर्चा करते हमें उसकी वैधता पर विचार करना पड़ता है। वेबर के अनुसार, यही वैधता सत्ता का मूल पक्ष है। आइए अब हम सत्ता की अवधारणा पर विचार करें।

9.2.2 सत्ता

सत्ता के लिए वेबर द्वारा प्रयुक्त जर्मन शब्द ''हैरशाफ्ट'' (herrschaft) का अनुवाद कई रूपों में हुआ है। कुछ समाजशास्त्रीयों ने इसे सत्ता (aauthority) कहा है, जबकि कुछ विद्वानों ने इसका अनुवाद ''प्रभुत्व'' (domination) अथवा आदेश (command) किया है। हैरशाफ्ट का अर्थ है ऐसी स्थिति में ''हैर'' (herr) अथवा स्वामी अन्यों पर प्रभुत्व जमाता है अथवा हुक्म चलाता है। रेमो आरो (1967:187) के अनुसार, हैरशाफ्ट की परिभाषा स्वामी की वह क्षमता है जिसमें वह उन लोगों से आज्ञापालन करवाता है जो सै़द्धांतिक रूप से उसके प्रति आज्ञाकारी है। इस इकाई मे हमने वेबर की हैरशाफ्ट की अवधारणा को सत्ता (authority) शब्द द्वारा व्यक्त किया है।

यह प्रश्न किया जा सकता है कि शक्ति (power) और सत्ता (aauthority) में क्या अन्तर है। जैसा कि आपने पढ़ा, शक्ति का अर्थ है किसी अन्य को नियंत्रित करने की योग्यता अथवा क्षमता। सत्ता से अभिप्राय है, वैद्य शक्ति। इसका अर्थ है कि स्वामी को समादेश देने का अधिकार है और वह उसके अनुपालन की अपेक्षा कर सकता है।

आइये अब हम उन तत्वों का विवेचन करें जो सत्ता को निरूपित करते है।

9.2.3 सत्ता के तत्व

सत्ता की व्यवस्था के अस्तितव के लिए निम्नलिखित तत्वों का होना आवश्यक है।

(i) कोई शासक/स्वामी अथवा शासकों/स्वामियों का समूह

(ii) कोई व्यक्ति/समूह जिस पर शासन किया जाना है

(iii) शासित लोगों के आचरण को प्रभावित करने की शासक की इच्छा जो आदेशो के माध्यम से व्यक्त होती है।

(iv) शासित द्वारा प्रदर्शित आज्ञा–पालन के रूप मे शासकों के प्रभाव का प्रमाण

(v) इस बात का प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष प्रमाण कि शासित लोगों ने यह तथ्य स्वीकार कर लिया है कि शासक के आदेशों का अवश्य पालन किया जाना है।

हमने देखा कि सत्ता का अभिप्राय शासक और शासित के बीच पारस्परिक संबंध होना आवश्यक है शासक यह मानते हैं कि उन्हें सत्ता का प्रयोग करने का वैध अधिकार है। दूसरी ओर शासित लोग शासक की इस शक्ति को स्वीकार करते है और उसका पालन करते है जिससे उसकी वैधता ओर पुष्ट होती है।

इस बिन्दु पर सोचिए और करिये 1 को पूरा करें।

सोचिए और करिए 1

सत्ता के तत्वों के संदर्भ में अपने दैनिक जीवन में सत्ता का कोई उदाहरण दीजिए।

इस पर एक पृष्ठ की टिप्पणी लिखिए। यदि संभव हो तो अध्ययन केन्द्र के अन्य विद्यार्थियों के साथ टिप्पणी का मिलान कीजिए।

बोध प्रश्न 1

(i) शक्ति की परिभाषा दीजिए।

....

....

....

(ii) शक्ति के महत्वपूर्ण स्रोत क्या हैं?

....

....

....

(iii) सत्ता के तीन महत्वपूर्ण तत्वों का परिचय दीजिए।

....

....

....

आइए, अब हम वेबर द्वारा बताए गए सत्ता के प्रकारों का विश्लेषण करें। किन्तु पहले हमें वेबर द्वारा दिये गये सामाजिक कार्य के वर्गीकरण को समझना होगा। अगले भाग 9.3 में आपको यह स्पष्ट होगा कि वेबर ने सत्ता के जिन प्रकारों की चर्चा की है, वे सामाजिक कार्य के प्रकारों के साथ गहराई से जुड़े हैं।

9.3 सत्ता के प्रकार

जैसा कि आपने पढ़ा है, सत्ता का अभिप्राय वैधता से है। वेबर के अनुसार वैधता की तीन प्रणालियां हैं, और इनमें से प्रत्येक के अनुरूप नियम हैं, जो आदेश देने की शक्ति को औचित्स प्रदान करते हैं। वैधता की निम्नलिखित तीन प्रणालियों को सत्ता के प्रकारों का नाम दिया गया है।

i) पारम्परिक सत्ता

ii) करिश्माई अथवा चमत्कारिक सत्ता

iii) तर्क–विधिक सत्ता

आइए, अब हम तीनों प्रकारों का उप–उपभागों में विस्तार से विवेचन करें।

9.3.1 पारंपरिक सत्ता

वैधता की यह प्रणाली पारम्परिक कार्य निरूपित होती है। दूसरे शब्दो मे यह व्यवहारिक कानून पर तथा प्रचीन परंपराओ की मान्यता पर आधारित है। इसका आधार यह विश्वास है कि किसी विशेष सत्ता का सम्मान किया जाना चाहिये क्योंकि यह युग–युगान्तरों से चली आ रही है।

पारंपरिक सत्ता के अंतर्गत शासक पीढ़ी दर पीढ़ी मिली प्रस्थिति के कारण व्यक्तिगत सत्ता का उपयोग करते हैं। उनके आदेश रीति रिवाजों के अनुरूप होते है और उन्हें शासित लोगों से अपना आदेश मनवाने का भी अधिकार होता है। प्रायः वे अपनी शक्ति का दुरूपयोग करते है। जो लोग उनके आदेशों का पालन करते है, वे उनकी प्रजा कहलाते है। यह प्रजा व्यक्तिगत निष्ठा के कारण आथवा प्रचीन काल से मान्यता प्राप्त पद के प्रति पवित्र सम्मान के कारण अपने स्वामी के आदेशों का पालन करती है। आइए, अब हम इस संबंध मे अपने समाज का ही एक उदाहरण लें। आप भारत मे प्रचलित जाति प्रथा से भलि भांति परिचित हैं। ''निम्न'' जातियां सदियों तक उच्च जातियों के अत्याचार क्यों सहती रही? इसका एक स्पष्टीकरण यह हो सकता है कि उच्च जातियों की सत्ता को परम्पराओं तथा मान्यताओं का समर्थन प्राप्त था। कुछ लोगो का कहना है कि ''निम्न'' जातियों ने अपने दमन को सामाजिक स्वीकृति दे दी थी। इस प्रकार यह देखा जाता है कि पारंपरिक सत्ता प्राचीन परंपराओं को पवित्र मानने के विश्वास पर आधारित है। इससे सत्ता का इस्तेमाल करने वालों को वैधता प्राप्त हो जाती है।

पारंपरिक सत्ता का संचालन लिखित नियमों और विधानों के अंतर्गत नहीं होता। यह पीढ़ी–दी–पीढ़ी विरासत में मिलता है। पारंपरिक सत्ता का कार्यान्वयन सगे–संबधियों तथा समर्थकों के बल पर किया जाता है।

आधुनिक युग में पारंपरिक सत्ता में क्षीणता आई है। पारंपरिक सत्ता का सर्वाधिक सशक्त उदाहरण राजतंत्र (monarchy) अभी प्रचलित है, किन्तु उसका स्वरूप अब काफ़ी दुर्बल हो चुका है। इंग्लैंड की महारानी पारंपरिक सत्ता का प्रतिनिधित्व करती है, किन्तु जैसा कि आपको मालूम होगा वह अपनी सत्ता का वास्तविक प्रयोग नहीं करती। इंग्लैंड के कानून महारानी के नाम पर लागू किए जाते हैं किन्तु इन कानूनों का निर्माण जनता के प्रतिनिधि अर्थात संसद सदस्य करते हैं। महारानी के अधीन संसद है, जो देश का शासन चलाती है, किन्तु वह मंत्रियों की नियुक्ति नहीं करती। वह नाम मात्र की राज्याध्यक्ष है।

संक्षेप में, पारंपरिक सत्ता को वैधता प्राचीन प्राचीन परंपराओं से प्राप्त होती है, जो कुछ लोगों को आदेश देने की क्षमता प्रदान करती है तथा अन्य लोगों को उनका पालन करने को बाध्य करती है। यह सत्ता विरासत में मिलती है और इसके लिए लिखित विधानों की आवश्यकता नहीं होती। शासक अपनी सत्ता का इस्तेमाल अपने समर्थक संबंधियों एवं मित्रों की सहायता से करते हैं। वेबर ने इस प्रकार की सत्ता को तर्कहीन माना है। इसलिए आधुनिक विकसित समाज में यह सत्ता बहुत कम पाई जाती है।

9.3.2 करिश्माई अथवा चमत्कारिक सत्ता

करिश्मा अथवा चमत्कार का अर्थ है कुछ व्यक्तियों के असाधारण गुण (देखें बॉक्स 9.1 करिश्मा)। ऐसे गुण से इन व्यक्तियों में सामान्य लोगों में निष्ठा तथा भावनाओं पर अधिकार कर लेने की क्षमता आ जाती है। करिश्माई सत्ता किसी व्यक्ति के प्रति असाधारण आस्था और उस व्यक्ति द्वारा बताई गई जीवन–शैली पर आधारित होती है। ऐसी सत्ता की वैधता व्यक्ति की अलौकिक अथवा मायावी शक्ति में निहित होती है। ऐसे नेता चमत्कारों, सैनिक या अन्य प्रकार की विजयों अथवा अपने अनुयायियों की आकस्मिक समृद्धि के माध्यम से अपनी शक्ति का प्रदर्शन करते हैं। जब तक यह करिश्माई नेता अपने अनुयाइयों अथवा समर्थकों की नज़र में अपनी चमत्कारिक शक्तियों को सिद्ध करते रहते हैं, तब तक उनकी सत्ता बराबर बनी रहती है। आपने

महसूस किया होगा कि करिश्माई सत्ता से जो सामाजिक क्रिया जुड़ी है, वह भावात्मक क्रिया है। करिश्माई नेताओं के प्रवचनों तथा उपदेशों के प्रभाव से समर्थक अत्यंत भावुक हो जाते हैं। यहां तक कि वे अपने नेता की पूजा तक करते हैं।

बॉक्स 9.1 करिश्मा (चमत्कार) शब्दकोशीय अर्थ है ईश्वरीय वरदान।

यह ईश्वर की कृपा से मिली योग्यता होती है। वेबर के अनुसार ''यह दूसरों पर लागू एक प्रकार की शक्ति है, जिसे लोग सत्ता के रूप में भी मानते हैं। जिस व्यक्ति के पार करिश्मे का गुण है उसकी सत्ता दैविक ध्येय, अंतदृष्टि, नैतिक गुण आदि से संबंधित मिथ्या के रूप में देखी जा सकती है।'' (देखें स्क्रूटन 1982:58)।

करिश्माई सत्ता पंरपरागत विश्वासों अथवा लिखित नियमों पर आधारित नहीं होती। यह अपनी विशेष क्षमता के बल पर शासन करने वाले नेता के विशेष गुणों का ही परिणाम होती है। करिश्माई सत्ता संगठित नहीं होती, अतः इसमें कर्मचारियों अथवा प्रशासनिक तंत्र की आवश्यकता नहीं होती। नेता और उसके सहयोगियों का अपना कोई निश्चित व्यवसाय नहीं होता और वे प्रायः पारिवारिक दायित्वों से विमुख रहते हैं। ये गुण कभी–कभी चमत्कारिक व्यक्तियों को क्रांतिकारी भी बना देते हैं, क्योंकि उन्होंने सभी परंपरागत सामाजिक प्रतिमानों तथा दायित्वों को अस्वीकार किया होता है।

व्यक्तिगत गुणों पर आधारित होने के कारण संबंद्ध नेता की मृत्यु अथवा उसके लापता होने की स्थिति में उत्तराधिकार की समस्या पैदा होती है। जिस व्यक्ति ने नेता का स्थान लिया है, संभव है उसमें वैसी चमत्कारिक शक्ति न हो। ऐसी स्थिति में नेता का मूल संदेष लोागों तक पहुंचाने के लिए जब किसी प्रकार का संगठन विकसित होता है तब मूल करिश्माई सत्ता या तर्क–विधिक सत्ता का रूप ग्रहण कर लेती है। वेबर अनुसार यह करिश्मा अथवा चमत्कार का सामान्यीकरण है।

यदि चमत्कारिक नेता का पुत्र, पुत्री अथवा कोई निकट संबंधी उसका उत्तराधिकारी बनता है तब पांरपरिक सत्ता का अस्तित्व बना रहता है। किन्तु यदि चमत्कारिक गुणों का स्पष्ट उल्लेख होता है या वे लिखित रूप में मौजूद होते हैं तो वह तर्क–विधिक सत्ता के रूप में बदल जाती है जिसके अंतर्गत इन गुणों से संपन्न कोई भी व्यक्ति नेता बन सकता है। इस प्रकार करिश्माई सत्ता को अस्थिर एवं अस्थायी माना जा सकता है। हमारे समाज में करिष्माई नेताओं के उदाहरण समूचे इतिहास में मौजूद ररे हैं। संत, पैगम्बर तथा कुछ राजनेता ऐसी सत्ता के उदाहरण हैं। उदाहरणतः कबीर, नानक, ईसा मसीह, मोहम्मद पैगम्बर, लेनिन और महात्मा गांधी आदि। लोगों ने उनका सम्मान पांरपरिक सत्ता या तर्क–विधिक सत्ता के कारण नहीं बल्कि उनकी व्यक्तिगत विशेषताओं तथा उनके द्वारा दिए गए संदेश और उपदेश के कारण किया। आइए अब मैक्स वेबर द्वारा बताए गए सत्ता के तीसरे प्रकार की व्याख्या करें।

बॉक्स 9.2 सामान्यीकरण (routinisation)

वेबर ने इस शब्द का प्रयोग 'चमत्कारिक नेतृत्व के संस्थागत नेतृत्व में परिवर्तित हो जाने के लिए किया, जिसमें व्यक्ति की बजाय पद सत्ता का केंद्र बन जाता है।' स्क्रूटन (1982: 415)

बोध प्रश्न 2

निम्नखिलित तीन प्रश्नों के सही उत्तर बताइए।

i) वेबर के अनुसार निम्नलिखित में से कौन सा सत्ता का प्रकार नहीं है?

क) पारंपरिक सत्ता

ख) तर्क–विधिक सत्ता

ग) करिश्माई अथवा चमत्कारिक सत्ता

घ) व्यक्तिगत सत्ता

ii) जब किसी नेता की मूल करिश्माई अथवा चमत्कारिक क्षमता पारंपरिक अथवा तर्क–विधिक सत्ता में बदल जाती है तो वेबर के अनुसार क्या स्थिति होती है?

क) करिश्मा अथवा चमत्कार का समान्यीकरण

ख) सत्ता का सामान्यीकरण

ग) नेतष्त्व का सामान्यीकरण

घ) शक्ति का सामान्यीकरण

iii) पारंपरिक सत्ता को किसके द्वारा वैधता मिलती है?

क) देश का कानून

ख) प्राचीन परंपराएं

ग) नेता की श्रेष्ठ उपलब्धियां

घ) उपर्युक्त सभी

9.3.3 तर्क–विधिक सत्ता

यह शब्द सत्ता की उस प्रणाली का बोध कराता है, जो तार्किक है तथा कानूनी भी। यह सत्ता नियमित कर्मचारी वर्ग में निहित है, जिन्हें कुछ लिखित कानूनों एवं नियमों के अतंर्गत काम करना होता है। इस वर्ग के लोगों की नियुक्ति उनकी योग्यताओं के आधार पर की जाती है। ये योग्यताएं निर्धारित तथा संहिताबद्ध होती है। जिन के पास यह सत्ता होती है, उनका यह व्यवसाय होता है तथा वे इसके लिए वेतन पाते हैं। इस प्रकार यह एक तार्किक प्रणाली है।

यह वैधानिक इसलिए है क्योंकि यह देश के कानून के अनुरूप है जिसे सभी की मान्यता प्राप्त होती है और उसका पालन करना सभी का कर्त्तव्य समझा जाता है। आदेशों और नियमों तथा उन नियमों को कार्यान्वित करने वालों की प्रस्थिति तथा पद दोनों की वैधता को स्वीकार किया जाता है एवं उसका सम्मान होता है।

तर्क–विधिक सत्ता आधुनिक समाज का विशिष्ट पहलू है। यह तार्किकता की प्रक्रिया की अभिव्यक्ति हैं। याद रखें कि वेबर ने तार्किकता को पश्चिमी सभ्यता की मुख्य विशेषता माना है। वेबर के अनुसार यह मानव चिंतन तथा विचार–विमर्श की विशेष देन है। अब

तक आपने तर्क–विधिक सत्ता तथा लक्ष्य प्राप्त करने के लिए तार्किक कार्य के परस्पर संबंध का भी प्रकार समझ लिया होगा।

आइए, अब हम तर्क–विधिक सत्ता के उदाहरणों को देखें। सभी लोग कर समाहर्ता (tax-collector) की आज्ञा मानते हैं क्योंकि उसके द्वारा जारी किए जाने वाले आदेष की वैधता में सब को विश्वास है। यह भी मान्य है कि उसे लोगों को कर संबंधी नोटिस भेजने का कानूनी अधिकार है। जब ट्रैफ़िक पुलिस वाला लोगों को गाड़ी रोकने का इषारा करता है तो उनका वाहन इसीलिए रोका जाता है क्योंकि उनमें कानून द्वारा उसे दिए गए अधिकार का सम्मान है। आधुनिक समाज में व्यक्ति से नहीं, बल्कि कानूनों एवं अध्यादेषों से षासन चलता है। लोग पुलिस के व्यक्ति का कहना उसके पद और वर्दी के कारण मानते हैं, जो कानून का प्रतिनिधित्व करती है। वे उसका कहना इसलिए नहीं मानते कि वह श्रीमान ''क'' अथवा ''ख'' नाम का व्यक्ति है। तर्क–विधिक सत्ता केवल राजनीतिक एवं प्रशासनिक क्षेत्र में नहीं बल्कि बैंक, उद्योग आदि आर्थिक क्षेत्रों तथा धार्मिक एवं सांस्कृतिक संगठनों में भी चलती है।

अगले भाग को पढ़ने से पहले सोचिये और करिये 2 को अवश्य पूरा कर लें।

सोचिए और करिए 2

अपने समाज में तर्क–विधिक सत्ता या पारंपरिक सत्ता का उदाहरण दीजिए, जिसमें उस सत्ता की वैधता के आधार का विशेष रूप से उल्लेख कीजिए तथा एक पृष्ठ की टिप्पणी लिखिए। यदि संभव हो तो अपने अध्ययन केंद्र के अन्य विद्यार्थियों से अपनी टिप्पणी का मिलान कीजिए।

9.4 नौकरशाही

जैसे कि ऊपर बताया गया है, नौकरशाही वह तंत्र है जिससे तर्क–विधिक सत्ता लागू होती है। मैक्स वेबर ने नौकरशाही का विस्तृत विवेचन किया है और एक आदर्श प्ररूप की परिकल्पना प्रस्तुत की है, जिसमें नौकरशाही की सभी विषेशताएं समाहित हैं। आइए, अब हम इसी आदर्श प्ररूप की व्याख्या करें, जिससे नौकरशाही के प्रमुख पहलुओं की जानकारी प्राप्त होगी।

9.4.1 नौकरशाही के मुख्य लक्षण

i) नौकरशाही का संचालन अधिकार क्षेत्रों के सिद्धांत पर होता है, जो कुछ कानूनों अथवा प्रशासनिक नियमों पर आधारित होते हैं। इनको नीचे दिया जा रहा है।

   क) अधिकारी वर्ग में नौकरशाही की गतिविधियों का बंटवारा सरकारी कर्त्तव्य के रूप में किया जाता है।

   ख) एक स्थायी अथवा नियमित प्रणाली होती है, जिसके अंतर्गत अधिकारी में सत्ता निहित होती है। यह सत्ता देश के कानूनों के अधीन होती है।

   ग) कठोर एवं विधिवत कार्यप्रणाली होती है, ताकि अधिकारी वर्ग अपना कर्त्तव्य उचित रूप में निभा सके।

   इन तीन लक्षणों के मूल से ''नौकरशाही सत्ता'' की रचना होती है, जो आधुनिक विकसित समाजों में विद्यमान है।

ii) नौकरशाही का दूसरा लक्षण है सत्ता सम्पन्न अधिकारियों का पदक्रम। इससे तात्पर्य यह है कि उच्च तथा निम्न अधिकारियों एवं कर्मचारियों का एक निश्चित ढांचा होता है। निचले पदों पर काम करने वाले कर्मचारियों को उच्च अधिकारियों के निर्देशन में काम करना होता है और उनके प्रति जवाबदेह रखनी होती है। इस तंत्र का एक लाभ यह है कि निचले अधिकारियों के प्रति असंतोष की अभिव्यक्ति उच्च अधिकारियों से अपील के रूप में शासित लोगों द्वारा की जाती है। उदाहरण के लिए यदि आप किसी कार्यालय में क्लर्क अथवा अनुभाव अधिकारी के आरचण से असंतुष्ट हो तो यह संभव है कि आप अपनी शिकायत उच्च अधिकारी तक पहुंचाएं।

iii) नौकारशाही कार्यालय का प्रबंध लिखित दस्तावेज़ों या फ़ाइलों के द्वारा चलता है। ये दस्तावेज़ उन कर्मचारियों द्वारा सुरक्षित तथा सही ढंग से रखे जाते हैं, जिसकी नियुक्ति इसी काम के लिए होती है।

iv) नौकरशाही कार्यालयों का काम विशिष्ट प्रकार का होता है और इसके लिए कर्मचारियों को समुचित प्रशिक्षण दिया जाता है।

v) पूर्ण विकसित नौकरशाही कार्यालय के संचालन के लिए कर्मचारियों को पूरी दक्षता से काम करना होता है। ऐसी स्थिति में कर्मचारियों को निर्धारित कार्य–समय से अधिक समय तक भी काम करना पड़ सकता है।

नौकरशाही तंत्र के मुख्य लक्षणों का अध्ययन करने के बाद आइए, अब हम इसमें पाए जाने वाले कर्मचारी वर्ग के संबंध में कुछ चर्चा करें।

9.4.2 नौकरशाही में अधिकारी वर्ग की विशेषताएं

वेबर ने नौकरशाही में अधिकारी निम्नलिखित विशेषताओं का उल्लेख किया है।

i) अधिकारी के लिए कार्यालय का काम उसका ''व्यवसाय'' है।

ii) उसके काम के बारे में अधिकारी को विषेश रूप से प्रषिक्षित किया जाता है।

iii) कार्यालय में उसकी प्रस्थिति और पद उसकी योग्यताओं के अनुसार निर्धारित होता है।

iv) उससे अपेक्षा की जाती है कि वह ईमानदारी से काम करें।

आइए, अब हम इस पर विचार करें कि अधिकारी की सरकारी स्थिति में उसका निजी जीवन किस प्रकार प्रभावित होता है।

i) नौकरशाही अथवा सरकारी अधिकारियों का समाज में ऊंचा दर्जा प्राप्त है।

ii) प्रायः एक स्थान से दूसरे स्थान या एक विभाग से दूसरे विभाग में उसका स्थानांतरण होता रहता है। इससे उसके व्यावसायिक तथा व्यक्तिगत जीवन में एक तरह की अस्थिरता रहती है।

iii) अधिकारियों को वेतन उत्पादक के अनुसार नहीं बल्कि उसके पद के अनुसार मिलता है। जितना ऊंचा उनका पद होगा, उतना अधिक उनका वेतन होगा। उन्हें पेंशन, भविष्यनिधि, चिकित्सा तथा अन्य प्रकार की सुविधाएं भी मिलती है। उनकी नौकरी अति सुरक्षित मानी जाती है।

iv) अधिकारियों को जीवन में आगे बढ़ने के अच्छे अवसर मिलते हैं। अनुशासित ढंग से काम करने वाले अधिकारी के लिए निचले स्तर से तरक्की करके उच्च स्तर पर पहुंचना संभव है।

अब समय है बोध प्रश्न 3 को हल करने का।

बोध प्रश्न 3

i) निम्नलिखित प्रश्न का सही उत्तर बताइए

नौकरशाही निम्न में से किसका उदाहरण है?

क) पारंपरिक सत्ता

ख) तर्क–विधिक सत्ता

ग) करिश्माई सत्ता

घ) इनमें से कोई नहीं।

ii) नौकरशाही सत्ता के महत्वपूर्ण लक्ष्णों का उल्लेख कीजिए।

....

....

....

....

....

iii) नौकरशाही में अधिकारियों की महत्वपूर्ण विशेषताओं का उल्लेख कीजिए।

....

....

....

....

....

9.5 सारांश

इस प्रकार के प्रांरभ में हमने ''शक्ति'' और ''सत्ता'' के बारे में वेबर की अवधारणाओं पर चर्चा की। इसके बाद वेबर द्वारा बताए गए सामाजिक कार्य के प्रकारों तथा सत्ता के प्रकारों का विवेचन किया गया। हमने पारंपरिक, करिश्माई अथवा चमत्कारिक एवं तर्क–विधिक सत्ता का अध्ययन किया। अंत में हमने उस तंत्र अर्थात् नौकरशाही के पहलुओं पर ध्यान दिया, जिसके माध्यम से तर्क–विधिक सत्ता का संचालन होता है। हमने नौकरशाही में अधिकारी वर्ग की विशेषताओं का भी अध्ययन किया।

9.6 संदर्भ

ऐलन, कीयर्न 2004, *मैक्स वेबर, ए क्रिटिकल इंट्रोडक्शन*, मिशिगन : प्लूटो प्रैस एन आर्बर

बेन्डिक्स, रैनआरी, 1960, *मैक्स वेबर, एन इंटलैक्चुअल पोर्ट्रेट*, लंदन : हाइनमन

फ़्राएंड, जूलियन, 1968, *द सोशियोलॉजी ऑफ मैक्स वेबर*, न्यूयार्क : रैंडम हाउस

मिचेल, जी. डी. (1968), *ए डिक्शनरी ऑफ सोशियोलॉजी*, रूटलेज एंड, लंदन : केगन पॉल

इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय पाठ्यसामग्री (2005). *समाजशास्त्रीय सिद्धान्त* (ESO 13), नई दिल्ली : इग्नू

9.7 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

i) दूसरों पर अपनी इच्छा थोपने की किसी व्यक्ति की क्षमता को शक्ति कहते हैं।

ii) शक्ति औपचारिक मुक्त बाज़ार में पनपने वाले हितों के मेल से प्राप्त की जा सकती है। यह सत्ता की सुव्यवस्थित प्रणाली से भी प्राप्त की जा सकती है जो आदेश देने के अधिकार तथा उसका पालन करने के कर्त्तव्य का निर्धारण करती है।

iii) क) किसी शासक/स्वामी अथवा शासकों/स्वामियों के समूह की विद्यमानता।

ख) शासित व्यक्ति/समूह की विद्यमानता

ग) शासितों द्वारा आज्ञा माने जाने और निश्ठा प्रदर्शन के रूप में शासकों के प्रभाव का प्रमाण ?

बोध प्रश्न 2

i) घ)

ii) क)

iii) ख)

बोध प्रश्न 3

i) ख)

ii) नौकरशाही सत्ता के तीन प्रमुख लक्षण हैं

क) इसका संचालन अधिकार क्षेत्र के उस सिद्धांत पर होता है, जो कुछ प्रशासनिक नियमों पर आधारित रहता है।

ख) एक स्थायी नियमित प्रणाली होती है, जिसके अंतर्गत अधिकारियों में सत्ता निहित होती है।

ग) कठोर तथा विधिवत कार्यप्रणाली, जिनसे यह सुनिश्चित किया जाता है कि अधिकारी अपना कर्त्तव्य उचित रूप से निभाते रहें।

iii) नौकरशाही के अधिकारियों की विशेषताएं हैं

क) कार्यालय का काम अधिकारियों का ''व्यवसाय'' होता है।

ख) उन्हें अपने काम के बारे में विशेष रूप से प्रशिक्षित किया जाता है।

ग) कार्यालय में उनकी स्थिति और पद उनकी योग्यताओं के अनुसार निर्धारित होता है।

घ) उनसे अपेक्षा की जाती है कि वे ईमानदारी से काम करें।

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY